महर्षि दयानन्द सरस्वती 200वीं जयन्ती 1824-2024 सदैव सत्य

टंकारा समाचार

(श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट का मासिक पत्र)

अगस्त 2024 वर्ष 28, अंक 8 ❑ दूरभाष (दिल्ली): 23360059, 23362110 (टंकारा): 02822-287756 ❑ विक्रमी सम्वत् 2081 ❑ कुल पृष्ठ 16
ई-मेल: tankarasamachar@gmail.com ❑ एक प्रति का मूल्य 20/-रुपये ❑ वार्षिक शुल्क 200 रुपये ❑ आजीवन 1000/-रूपये

राष्ट्रीय स्वाभिमान को जगाया आर्य समाज ने

❑ स्व. डा. भवानीलाल भारतीय

उन्नीसवीं शताब्दी ने भारत में नवजागरण के सूर्य को उदय होते देखा। राजा राम मोहनराय, देवेन्द्र नाथ ठाकुर, केशवचन्द्र सेन तथा गुजरात के दयानन्द सरस्वती ने यदि सामाजिक और धार्मिक सुधारों की अलख जगाई तो बंकिम चन्द्र चट्टोपाध्याय ने आनन्द मठ जैसा प्रथम राजनैतिक उपन्यास लिखकर देशवासियों को वन्दे मातरम् का राष्ट्रीय गीत दिया। पंजाब, संयुक्त प्रान्त, राजस्थान, बिहार, महाराष्ट्र में आर्य समाज के संस्थापक दयानन्द सरस्वती ने निरन्तर भ्रमण, वाणी एवं लेखन के द्वारा देशवासियों में राष्ट्रीय स्वाभिमान को जगाया। पूर्वाग्रह युक्त इतिहासकारों ने इस नवीन जागृति को पश्चिम की देन कहा है और अंग्रेजी शिक्षा को राष्ट्रीय भावों का उद्भावक माना है। इसके विपरीत राम विलास शर्मा जैसे विद्वानों का मत है कि दयानन्द द्वारा प्रचारित राष्ट्रवाद शत प्रतिशत भारत के गौरवपूर्ण अतीत से प्रेरणा लेता था।

अंग्रेजों द्वारा लिखे गए इतिहास ने इस भ्रान्ति को जन्म दिया कि पश्चिमी शक्तियों के आगमन से पहले इस उप महाद्वीप (वे भारत को एक देश न मान कर सब कान्टीनेंट कहते थे) के निवासी मूर्ख, अशिक्षित, अंध विश्वासों तथा जड़ रूढ़ियों की जकड़न में फंसे लोगों ने जिन्हें शिक्षा, संस्कार तथा उन्नति का मार्ग यूरोपियन जातियों और विशेषकर अंग्रेजों ने दिखाया। नव जागरण के प्रमुख सूत्रधार दयानन्द ने बताया कि भारत तो आरम्भ से ही विश्व मानवता को एकता, सत्य, अहिंसा आदि नैतिक मूल्यों का पाठ पढ़ाने वाला जगद् गुरु रहा है। उन्होंने भारत को स्वर्णभूमि कहा तथा मनु के एक श्लोक को उद्धृत कर यह प्रचारित किया कि विगत काल में अन्य देशों के जिज्ञासु छात्र भारत में आकर आचार एवं नैतिकता का पाठ सीखते थे।

सच पूछें तो दयानन्द ने आर्य समाज के स्थापना वर्ष 1875 में अपना प्रमुख ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश लिखा और उसमें सुराज्य की तुलना में स्वराज्य का महिमा मण्डन किया। उनकी मान्यता थी कि विदेशी राज्य चाहे कितना ही मतनिरपेक्ष (सैकुलर) होने की घोषणा करे वह माता-पिता की भांति अपनी शासित प्रजा के प्रति स्नेह व्यवहार क्यों न बनाए तथा न्याय युक्त शासन कर दम्भ करे, स्वराज्य (अपना शासन) की तुलना में कभी वरीय नहीं हो सकता है और न ग्राह्य। उनका यह कथन सम्भवत: महारानी विक्टोरिया के 1858 में प्रसारित उस घोषणा को ध्यान में रखकर कहा गया था जिसमें 1857 की गतिविधियों की पृष्ठभूमि में रानी ने भारत को भविष्य में सुशासन देने का वायदा किया था। दयानन्द की यह सदिच्छा केवल वाणी विलास ही नहीं था। उनके अनुयायियों ने उसे क्रियान्वित किया। दयानन्द स्वयं स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग तथा आर्थिक स्वावलम्बन के लिए स्वदेशी कला कौशल को अपनाने के पक्षपाती थे।

स्वामी दयानन्द को देशवासियों की गरीबी का भरपूर अहसास था। जब विदेशी शासन ने नमक जैसी जनोपयोगी वस्तु के उत्पादन पर प्रतिबन्ध लगाकर नमक का कारोबार अपने हाथ में ले लिया। (राजस्थान में सांभर, डीडबाना तथा पंचपद्रा आदि नामक उत्पादन के संस्थानों पर सीधे ब्रिटिश हुकूमत का अधिकार था) तो दयानन्द ने अपने ग्रन्थ में इस तानाशाही कदम की निंदा की और इसे जनविरोधी बताया। आज के नक्सलवादियों का सरकार पर आरोप है कि जंगलों में उत्पन्न साधनों का प्रयोग जनजातियों के लोगों को करने नहीं दिया जाता और यह अशान्ति का कारण बनता है। दयानन्द भी इस शिकायत से शत-प्रतिशत सहमत

(शेष पृष्ठ 15 पर)

'टंकारा समाचार' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

आशा से सफलताओं के सूत्र विकसित होते हैं

– पद्मश्री डॉ. पूनम सूरी

प्रधान, डी.ए.वी. कॉलेज प्रबन्धकर्त्री समिति एवम् आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, ट्रस्ट प्रधान महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा (जन्मभूमि)

वैदिक साहित्य में आशा के भाव को व्यक्ति के विकास में एक योगदायक गुण माना गया है। आशा शब्द वेदों में दिशावाचक भी है।

सब आशाएं दिशाओं की तरह मेरी मित्र बन जायें। जैसे समस्त दिशाएं मेरे व्यक्तित्व के निर्माण में सहयोग देती हैं वैसे ही समस्त आशाएं मुझे फल प्राप्त करायें।

वास्तव में आशा निरन्तर कार्य करते रहने की प्रेरणा का आधार है। आशा के कारण ही सम्पूर्ण सफलताओं के समस्त सूत्र विकसित होते हैं। यदि मन में आशा ही न हो तो कर्म में प्रवृति ही न होगी। प्रवृति नहीं होगी तो कर्म की सफलता की आशा भी नहीं की जा सकती। गर्भवती माँ आशा के सानिध्य में ही रह कर नौ महीने तक शिशु के जन्म की प्रतीक्षा करती है, क्योंकि आशा ही आस्था की जन्म दात्री है, अत: समस्त आस्थाओं के पीछे भिन्न-भिन्न आशाओं की कल्पना की जा सकती है। जैसे छात्रों की पढ़ाई, व्यापारियों के व्यवसाय और कर्मियों के कर्मों को आशा के दृष्टिकोण से देखने पर यह आशा जन्म से मृत्यु तक जीवन संचार करती नजर आती है। "निराशा" व्यक्ति के जीवन में चन्द्र ग्रहण के समान है तो "हताशा" मृत्यु है। आशा ही वह संजीवनी बूटी है जो रक्त संचार का कारण बनती है। अत: आशा ईश्वरीय वरदान है।

वैदिक साहित्य में आश और आशवाद का पुरजोर समर्थन करते हुए कहा गया है कि "जिन-जिन आशाओं को हम लेकर कर्म क्षेत्र में उतरते हैं वे सब पूर्ण हों। जीवन में आशा का साथ नहीं छोड़ना चाहिए। अंग्रेजी में कहावत है Hope for the best and be ready for the worst अर्थात् हमेशा श्रेष्ठ की आशा करो और बुरे से बुरे के लिए तैयार रहो। हम हमेशा सुन्दर मन व आशावादी बने रहें। हम अपने जीवन में सूर्य को चमकते हुये ही देखें।

अतीत का इतिहास आशावादियों के संकल्पों एवं धुन के धनियों की प्रेरक घटनाओं से परिपूर्ण है। मेवाड़ की स्वतन्त्रता की आशा संजोये महाराणा प्रताप, मराठा राज्य की स्थापना की आशा के केन्द्र बिन्दु छत्रपति शिवाजी, स्वतन्त्रता समर के पड़ावों पर झलकती व चमकती आशा को आंखों में लिए बाल गंगाधर तिलक, चन्द्रशेखर आजाद और बिस्मिल आदि आशा वादियों के व्यक्तित्व आशा से भरे पड़े थे जो अन्तत: सार्थकता में बदल गये। जीवन में बहुत कुछ ऐसा भी होता है जो प्रतिकूल होता है और बहुत कुछ ऐसा भी जो अनुकूल होता है। इन दु:खदायी क्षणों में आशा की डोर को टूटने न देना ही वीरता है।

गीता में निष्काम व निर्मम बनने का तात्पर्य आशाहीन, निराशा या हताश होना नहीं है अपनी व्यर्थ एवम् आधारहीन व कर्म हीन आशा पर नियन्त्रण रखना ही गीता का संदेश है। गीता में योगीराज श्री कृष्ण जी ने न केवल अकेले अर्जुन को बल्कि जन मानस को यह संदेश दिया था कि मरने पर स्वर्ग की प्राप्ति है तो जीतने पर पृथ्वी का उपभोग है, दोनों हाथों में आशा की डोर है। अत: कर्म क्षेत्र के लिए हे अर्जुन! उठ खड़ा हो। जीवन आशा के बिना संवर नहीं सकता। अत: आशा के अंकुर को हमेशा जागृत रखना चाहिए। घोर निराशा के अन्धकार में भी आशादीप को प्रज्ज्वलित रखना चाहिए।

अत: हमें आशावादी ही होना चाहिए और आशा का दामन कभी न छोड़ें। नकारात्मक विचारों को तो मन में कभी स्थान ही न देवें।

– पद्मश्री डॉ. पूनम सूरी जी के साथ अनऔचपारिक बैठक में चर्चा के कुछ अंश

गौ-दान : महा-दान

श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा द्वारा संचालित अन्तर्राष्ट्रीय उपदेशक महाविद्यालय में ब्रह्मचारियों कि दिन- प्रतिदिन बढ़ती संख्या के कारण टंकारा स्थित 'गौशाला' से प्राप्त दूध ब्रह्मचारियों हेतु पर्याप्त नहीं हो पा रहा है। इस कारण ट्रस्ट ने यह निश्चय किया कि तुरन्त नयी गायों को खरीद लिया जाये ताकि ब्रह्मचारियों को पर्याप्त मात्रा में दूध उपलब्ध कराया जा सके। **वर्तमान में अच्छी गाय 75000/- रूपये के लगभग प्राप्त हो रही है।**

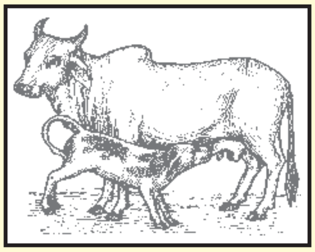

टंकारा स्थित गौशाला हेतु भारत के असंख्य आर्य परिवारों एवं आर्य संस्थाओं की ओर से 25,000/- रुपये गाय की खरीद हेतु सहयोग राशि भेज रहे है। 3 सहयोगी प्राप्त होते ही गाय खरीदी जाती है। गुरुकुल में ब्रह्मचारियों की बढती संख्या को देखते हुए एवं कच्छ में गर्म वातावरण होने के कारण गौओं का कम दूध देने के कारण अभी भी गायों की आवश्यकता है। दानी महानुभावों से निवेदन है कि इस पुण्य कार्य में अपनी श्रद्धानुसार आहुति डाल कर पुण्यार्जन करें। आप इस पुण्य कार्य के लिए राशि **श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा**, के नाम चैक/ ड्राफ्ट द्वारा केवल खाते में आर्य समाज (अनारकली), मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-110001 पर भिजवाकर कृतार्थ करें।

टंकारा ट्रस्ट को दी जाने वाली राशि आयकर से मुक्त है।

निवेदक:- योगेश मुंजाल (कार्यकारी प्रधान) **अजय सहगल** (मन्त्री)

क्या जानते हो अपने विषय में

मनुष्य अपने जन्म काल से ही और अपने स्वभाव से ही जिज्ञासु रहा है। प्रभु ने मनुष्य को यह स्वभाव प्राकृतिक रूप में ही दिया है। यही कारण है कि सभी जीवों में मनुष्य ने ही अपने इस जिज्ञासु स्वभाव के कारण सबसे अधिक प्रगति की है। किसी और जीव ने नहीं जैसे कि जानवर इत्यादि।

इसी जिज्ञासा ने ही कई वैज्ञानिकों को प्रेरणा दी और नये-नये आविष्कार हुए। आज कम्प्यूटर के उपरान्त इन्टरनेट जैसे माध्यम का विकास हुआ। इस माध्यम ने पूरे विश्व को एक मेज पर लाकर खड़ा कर दिया है। सन्देश ही नहीं इस माध्यम से बात करने वाले एक दूसरे का चलचित्र भी देख सकते हैं। इस चमत्कारी माध्यम ने जिज्ञासुओं के लिए एक ईशारे पर सभी जानकारी देनी प्रारम्भ कर दी हैं। आज हर प्रश्न का उत्तर इस माध्यम द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

अणु, परमाणु, खगोल, ग्रह, आत्मा, ईश्वर, ज्योतिष, ओबामा, अमिताभ बच्चन, स्लम डोग जिसके बारे में पूछो पलक झपकते ही स्क्रीन पर उत्तर आ जाता है और हम सन्तुष्ट हो जाते हैं। इससे जिज्ञासुओं की प्यास तो पूर्ण हुई परन्तु जिज्ञासु मनुष्य के सामाजिक रूप का लोप होता गया। अपने आप में ही सीमित हो रहा है, मनुष्य कम्प्यूटर से प्राप्त जानकारी को ही पूर्ण मान वह यह समझने लगा है कि उसे पूर्ण जानकारी है और वह ही सबसे अधिक सक्षम जानकारी रखता है। बच्चों ने अपने माता-पिता से अपने जिज्ञासापूर्ण प्रश्न पूछने बन्द कर दिये हैं और इस इन्टरनेट युग के माता-पिता भी खुश हैं कि पूर्व की भांति बच्चे अब प्रश्नों की झड़ी लगाकर परेशान नहीं करते। पूरे विश्व के बालक/युवा एक ही प्रकार की जानकारी प्राप्त कर रहे हैं, जो इंटरनेट पर उपलब्ध है उससे अधिक नहीं उससे कम नहीं, जानकारी में विविधता नहीं है।

आओ ले चलें आपको बिना कम्प्यूटर, बिना इन्टरनेट और बिना टीवी के युग में। सायंकालीन अथवा रात्रि भोजन के उपरान्त (जैसा कि आयुर्वेद में लिखा है कि रात्रि भोजन के उपरान्त कम से कम दो घंटे तक शय्या पर न जायें) सभी लोग बैठक में (जिसे आज ड्राईंग रूम कहा जाता है) अथवा आंगन में जो कि मुख्य द्वार और घर के बीच के स्थान को कहा जाता था। (यह स्थान आज प्रायः कुछ ही घरों में देखने को मिलता है जो कि आज की तिथि में नगण्य प्रतिशत है), बैठकर परिवार के सभी बुजुर्ग, बड़े, बच्चे अपने जिज्ञासापूर्ण प्रश्न माता-पिता से पूछते थे, माता-पिता अपने शंका समाधान दादा दादी से पूछते थे। इस प्रकार एक कड़ी बनती थी। घरों में जिज्ञासा का वातावरण था। हर कोई एक दूसरे से कुछ न कुछ जानने का प्रयत्न करता था। प्रश्नों के उत्तर खोजे जाते थे। उनमें सबके अपने-अपने अनुभव होते थे। दूसरे दिन उत्तर ढूंढ़कर लाने के लिए बुजुर्ग बच्चों को प्रेरित करते थे। पुस्तकों का आदान प्रदान होता था। पुस्तकों में से नई-नई वस्तुएं ढूंढ़कर एक दूसरे से बढ़-चढ़कर बताने की होड़ लगी रहती थी। इसी उत्सुकता और होड़ में युवकों की ज्ञानवृद्धि हुआ करती थी। इससे मस्तिष्क हर समय क्रियेटिव बना रहता था। यही कारण था कि इस काल में आर्य समाज का प्रचार प्रसार सक्षम ढंग से हुआ।

आज के परिप्रेक्ष्य में भी उपरोक्त वातावरण जिन गांवों का शहरीकरण नहीं हुआ है वहां पाया जाता है और ऐसे गांवों में धार्मिकता अधिक देखी गई है।

इस प्रकार की चर्चा में बैठने का मुख्य कारण जो हमें समझ में आता है वह था मनोरंजन के कम साधन उपलब्ध होना। रेडियो, टीवी, चलचित्र इत्यादि माध्यम उपलब्ध नहीं थे। इन ज्ञानवर्धक चर्चाओं के माध्यम से ही मनोरंजन हुआ करता था।

अब हम आपको वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ले आते हैं, जहां युवक अपने ज्ञान को पूर्ण मानते हुए अपना जीवन व्यतीत कर रहा है। इसी प्रकार के युवक के घर पर एक विद्वान संन्यासी का आगमन होता है जोकि उसके माता-पिता के निमन्त्रण पर उपस्थित हुए थे। विद्वान स्वामी जी ने युवक से पूछा कि तुम बहुत कुछ जानते हो, मुझे यह बताओं की आप अपने बारें में क्या जानते हो? युवक ने स्वभाविक रूप से अपना नाम, अपने माता-पिता का नाम, घर का पता, अपनी शिक्षा एवं कार्यालय के बारे में बता दिया। स्वामी जी ने फिर प्रश्न किया कि इसके बाद क्या जिससे युवक संकट में आ गया। तब स्वामी जी ने युवक से खुद के बारे में जानने का सुझाव दिया और उन्होंने कहा कि खुद को जाने बिना इस दुनिया को नहीं जाना जा सकता। जिसमें खुद के प्रति जिज्ञासा का भाव नहीं, वह कभी भी अधिक सफल नहीं हो सकता। ज्ञान का विस्तार, व्यक्ति का विकास और माननीय गुण खुद को जानने के पश्चात ही आते हैं।

ऋषि-मुनियों, समाज शास्त्रियों, वैज्ञानिकों ने जो विकास किया, उसके पीछे था जिज्ञासा भाव। शास्त्रों में आता है, जिज्ञासा के बाद ही मनुष्य के भीतर प्रेरणा, संवेदना, करुणा और विनम्रता आती है जो अहंकार, भेद भाव और असांस्कृतिक सत्ता को पिघला देती है। इसलिए पहले स्वयं को जानो, इसके लिए सबसे सरल और सक्षम माध्यम है पढ़ने के लिए सत्यार्थ प्रकाश और सुनने के लिए आर्य समाज का साप्ताहिक सत्संग। आओ फिर लौट चलें इन्हीं माध्यम की ओर। इन्टरनेट सक्षम हो सकता है लेकिन आवश्यक एवं पूर्ण नहीं। इन्टरनेट सुविधा हो सकती है लेकिन ज्ञान का पूर्ण स्रोत नहीं।

अजय टंकारावाला

आवश्यक सूचना

आपका लोकप्रिय आर्य मर्यादाओं का समाचार पत्र ''टंकारा समाचार'' इंटरनेट एवम् वट्सअप पर उपलब्ध। सभी सदस्य पाठकों से अनुरोध है कि अपना ई-मेल पता एवम् वट्सअप मोबाइल नम्बर **9560688950** पर **सदस्य संख्या एवम् नाम सहित** भेजे ताकि हम पंजीकृत कर सके जिससे कि आपको उपरोक्त माध्यम से जोड़ा जा सके।

- ट्रस्ट मन्त्री एवम् सम्पादक

टंकारा ट्रस्ट द्वारा चलाई जा रही गतिविधियों के लिए आप निम्न प्रकार से सहयोग कर सकते हैं

परिवार के एक बालक को गुरुकुल में पढ़ाएं अथवा गुरुकुल के
एक ब्रह्मचारी का वार्षिक व्यय 20,000/- रुपये देवें

□□□

गौ-दान : महा-दान–उपदेशक विद्यालय के ब्रह्मचारियों की पर्याप्त मात्रा में दूध की व्यवस्था हेतु एक गऊदान
करें अथवा 75,000/- रुपये की सहयोग राशि गऊ हेतु देवें।
(तीन व्यक्ति मिलकर भी 25,000/- प्रति व्यक्ति भी दे सकते है।)

□□□

गऊ पालन एवं पोषण हेतु 12,000/- रुपये का हरा चारा एवं
पौष्टिक आहार की व्यवस्था (एक गऊ का वार्षिक व्यय)

□□□

1000/- रुपये की सहयोग राशि देकर स्वामी दयानन्द सरस्वती जन्मभूमि के सहयोगी सदस्य बनें। यह राशि
आपको प्रतिवर्ष देनी होगी। इसलिए अपना पूरा पता अवश्य लिखवायें।
जो दान देवें उसके अतिरिक्त यह 1000/- रूपये राशि अवश्य देवें।

□□□

श्री ओंकारनाथ महिला सिलाई-कढ़ाई केन्द्र की बेटियों द्वारा बनाए गए
सामान को क्रय करके सहयोग कर सकते हैं।

□□□

ब्रह्मचारियों के एक सत्र का भोजन 20,000/- रुपये की सहयोग राशि देकर।

□□□

ऋषि बोधोत्सव पर 1,50,000/- रुपये की सहयोग राशि देकर एक सत्र के भोजन में सहयोग

□□□

20,000/- रुपये की सहयोग राशि प्रति वर्ष किसी एक दिन का (जन्मदिवस अथवा
स्मृति दिवस) ब्रह्मचारियों का भोजन देकर सहयोग कर सकते है।

□□□

ब्रह्मचारियों के पहनने हेतु सफेद कपड़ा एवं दैनिक प्रयोग में आने वाली वस्तुएं देकर

टंकारा ट्रस्ट को दी जाने वाली राशि आयकर की धारा 80 G के अन्तर्गत मान्य है।
एवम् C.S.R. दान प्राप्त करने हेतु पंजीकृत।

यह दान नकद/चैक/ड्राफ्ट/मनीऑर्डर द्वारा "**श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा**" के नाम दिल्ली कार्यालय आर्य समाज (अनारकली) मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 अथवा श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा जिला–मौरबी–363650 (गुजरात) के पते पर भिजवाकर पुण्यार्जन करें। आप सहयोग राशि **खाता न. 4665000100001067, पंजाब नैशनल बैंक, IFSC CODE PUNB0015300** में जमा करा सकते हैं। जमा की गई सहयोग राशि, तिथि एवम् पते की सूचना मो. 09560688950 पर देवें।

—:निवेदक:—

योगेश मुंजाल
कार्यकारी प्रधान

अजय सहगल
मन्त्री (मो. 9810035658)

उपकार्यालय: आर्य समाज अनारकली मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-110001 सम्पर्क: 09560688950 (व्यवस्थापक)

रक्षाबन्धन (श्रावणी पर्व)

❒ आचार्य गवेन्द्र शास्त्री

रक्षाबन्धन भारतीय वैदिक संस्कृति को जीवित रखने वाला पर्व है। पर्व का अर्थ **पृणाति-पूर यति-इति** पर्व जो पूर्ण कर दे, तृप्त कर दे, उत्साहित कर दे वह पर्व है। भारतीय परम्परा में अनेक पर्व हैं-उन्हीं पर्वों में से श्रावणी पर्व का विशेष महत्व है। श्रावणी पर्व श्रावण शुक्ल पूर्णिमा को धूमधाम से मनाया जाता है। श्रावणी पर्व अनेक नामों से जाना जाता है, जैसे श्रावणी, उपाकर्म, रक्षाबन्धन आदि।

रक्षाबन्धन का अभिप्राय है-आत्मरक्षा के लिए बन्धन। बहन अपने भाई के हाथों में रक्षा सूत्र बांधती है और अपने भाई के सुखी दीर्घायु की कामना करती है। भाई भी अपनी बहन की रक्षा का प्रण लेता है। ऐसे ही अवसर पर भाई के उद्‌गार मुखरित हो उठते हैं-

रक्षा, रक्षा कायरता से, मर मिटने का दे वरदान।
हृदय-रक्तसे टीका कर दे, मेरे मस्तक पर लाल निशान।
वह जीवन का स्रोत आजकर, मेरे मानस का संचार।
कांप न जाऊं देख समय में, रिपु की बिजली सी तलवार।

कितनी ही खेदजनक बात है कि आज रक्षाबन्धन के पुनीत त्यौहार ने अपनी मूलभूत महत्ता को खो दिया है। राखी के प्रेम पूर्ण सूत्र चांदी की हाट पर बिक गये हैं। वास्तविकता का स्थान कृत्रिमता और ढोंग ने ले लिया है। बहनों में लोभ भावना आ गई है यदि भाई सम्पन्न है तो उसकी कलाई में मूल्यवान राखी बांधी जाती है और निर्धन भाई की कलाई को शिष्टाचार की वेदी पर चढ़ा दिया जाता है। यही कारण है कि आज भाई-बहन में उतना प्यार नहीं रहा जितना होना चाहिए। कई भाई तो ऐसे भी हैं जो वर्ष पर अपनी बहनों को नहीं पूछते केवल इस दिन अपनी बहन से राखी बंधवाकर परम्परा का निर्वाह कर लेते हैं। राखी कलाई की शोभा नहीं और न ही रेशम की कोमल कड़ी ही है। यह तो लोहे की हथकड़ी है जिसे भाई सहर्ष पहनता है। राखी के धागों में बहन का प्यार होता है बहन की रक्षा का भार होता है। बहन अपनी हो या मुंहबोली रक्षासूत्र में बंधा भाई प्रण करता है, बहन पर आंच नहीं आने देता। विपत्ति आने पर कभी कर्णावती ने हुमायूं को राखी बांधी थी। सिकन्दर की प्रेयसी ने पोरस को रक्षाबन्धन में बांधा था। राजपूतों ने अपनी बहनों की रक्षा हेतु राखी की चुनौती को स्वीकार किया था। आज भी भाई की कलाई पर बंधी राखी चुनौती दे रही है।

श्रावणी उपाकर्म श्रावण मास से ही श्रावण पर्व बना है जिसका अर्थ है सुनना-सुनाना जिस पर्व में होता है वह श्रावणी है। इस पर्व पर समस्त आर्य समाज वेद प्रचार सप्ताह समारोह का आयोजन करते हैं और श्री कृष्णजन्माष्टमी तक वेद कथाओं, सत्संगों का कार्यक्रम होता हैं स्वामी दयानन्द ने आर्य समाज के (3) नियम में लिखा है वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

आओ वेद प्रचार करें सब, रोगों का उपचार करें सब।
सबसे सुन्दर देश हमारा, इसको प्रभु ने स्वयं संवारा।
सबको सबका मिला सहारा, वही पुनः आचार करें सब।
आओ वेद प्रचार करें सब, रोगों का उपचार करें सब।

ब्राह्मणों के लिए यह पर्व विशेष महत्व रखता है क्योंकि ब्राह्मण ही क्षत्रीय आदि वर्णों (मनुष्यों) का मार्गदर्शक होता है। अतः उसे ज्ञानी होना आवश्यक है। वेदादि शास्त्रों के पढ़ने से स्वाध्याय करने से वह ज्ञानी होता है। वेद स्वाध्याय उसका अभिन्न अंग है। इसलिए संन्यासी, ब्राह्मण के लिए कहा गया है-

संन्यसेत् सर्व कर्माणि वेदमेकं न संन्यसेत्।

भले ही अन्य सब कर्म छोड़ दे परन्तु एकमात्र वेदों का पठन-पाठन रूपी कर्म न छोड़े।

प्राचीन काल में इस दिन गुरुकुलों में यज्ञोपवीत धारण करने की परम्परा थी। आज भी इस श्रावणी पर्व के अवसर पर हर्षोल्लास के साथ यज्ञपूर्वक नये प्रविष्ट ब्रह्मचारियों का उपनयन-यज्ञोपवीत संस्कार तथा वेदारम्भ संस्कार किया जाता है। इस प्रकार यह श्रावण शुक्ल, पूर्णिमा, रक्षाबन्धन, श्रावणी उपाकर्म, श्रावणी पर्व हर वर्ष हमें शिक्षा देता है।

श्रावणी पर्व अब आया, इसमें रहे उत्साह सवाया।
श्रावणी प्रथा अति प्यारी, अपनायें इसको नर नारी।
ऋषि ने यह उद्घोष किया था, कहा कार्य यह मंगलकारी।
बड़े भाग्य से अवसर पाया, ऋषि ने आर्य समाज बनाया।
वेद पढ़ो यह मन्त्र सुनाया, कोई इससे रहे न वंचित,
सबको यह उद्देश्य जनाया, सब आर्यों के यह मन भाया।

- वैदिक प्रवक्ता, आर्य समाज, राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली

एक प्रेरणा परिवार के एक बालक को गुरुकुल में पढ़ाएं अथवा गुरुकुल के एक ब्रह्मचारी का वार्षिक व्यय देवें

अन्तर्राष्ट्रीय उपदेशक महाविद्यालय टंकारा, जहां इस समय 110 ब्रह्मचारी अध्ययनरत हैं, जिन्हें वैदिक मान्यताओं के प्रचार एवं कर्मकाण्डीय संस्कारों हेतु तैयार किया जाता है। आज की आवश्यकता है कि सुयोग्य धर्माचार्यों की संख्या अधिक से अधिक हो। आप सभी दानी महानुभावों से प्रार्थना है कि अपनी आने वाली पीढ़ी को वैदिक संस्कारों से ओत-प्रोत करने हेतु इन ब्रह्मचारियों के एक वर्ष के अध्ययन का व्यय दान स्वरूप ट्रस्ट को दें। यह ऋषि ऋण से उऋण होने में आपकी आहुति होगी। **एक ब्रह्मचारी का एक वर्ष का अध्ययन/वस्त्र/खानपान का व्यय 20,000/- रुपये है।** आपसे प्रार्थना है कि अपनी ओर से अथवा अपनी संस्थाओं की ओर से कम से कम एक ब्रह्मचारी के अध्ययन व्यय की सहयोग राशि **'श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा'** के नाम चैक/ ड्राफ्ट केवल खाते में दिल्ली कार्यालय के पते पर भिजवाकर पुण्यार्जन करें।

टंकारा ट्रस्ट को दी जाने वाली राशि आयकर से मुक्त है।

निवेदकः- योगेश मुंजाल (कार्यकारी प्रधान) **अजय सहगल** (मन्त्री)

श्रीकृष्ण की राजनीति और वर्तमान उग्रवाद

❒ स्व. डॉ अशोक आर्य

योगीराज कृष्ण के जन्म से पूर्व लगभग एक सहस्त्र वर्ष पूर्व ही इस देश की अधोगति आरम्भ हो गई थी। योगीराज ने अपनी नीति के प्रयोग से इस अधोपतन को समाप्त करने का भरपूर प्रयास किया। यह उनकी राजनीति का ही परिणाम था कि जो भारत देश महाभारत काल में ही विदेशियों का गुलाम होने की अवस्था में था, वह देश चार हजार वर्ष बाद में गुलाम हुआ। श्रीकृष्ण जी के पश्चात् भी हमारे जिस राजनेता ने भी उनकी नीति का अनुसरण किया, इतिहास में उसने स्थाई स्थान पाया।

भारतीय इतिहास में महाभारत के पश्चात् हम चाणक्य को प्रथम राजनेता के रूप में पाते हैं। जिस ने कृष्ण जी के आदर्श राज नियमों को अपनाया तथा चन्द्रगुप्त को आगे रखकर भारत की सीमाओं को मजबूत किया। फिर शिवाजी महाराज ने उसी नीति को अपनाते हुए दक्षिण भारत तथा बन्दा वैरागी, हरिसिंह नलवा, महाराजा रणजीत सिंह आदि ने उत्तर भारत में इसी राजनीति का अवलम्बन किया। इसी का ही परिणाम था कि ये महापुरुष सदा अपने सभी प्रकार के अभियानों में सफल हुए। भारत स्वाधीन हुआ। उस समय देश अति विकट अवस्था में था। इस अवस्था में देश पुनः बंट कर नष्ट हो जाता यदि कृष्ण नीति को अपना कर सरदार पटेल देशी रियासतों की लगाम न कसते। इस प्रकार कृष्ण को यदि महर्षि दयानन्द ने अपने शब्दों में इस प्रकार कहा कि **"कृष्ण ने जन्म से मरण पर्यन्त कोई पाप नहीं किया"** तो कोई अतिशयोक्ति नहीं की। महाभारत का वह काल था, जिस में ब्राह्मण अपनी मर्यादाओं को भूल रहे थे। जन्म को जाति का आधार बनाने लगे थे। तभी तो एकलव्य व कर्ण को समान शिक्षा देने में बाधा खड़ी की गई। यह वह समय था जब क्षत्रियों की मर्यादाएं समाप्त हो रही थीं। तभी तो श्रीकृष्ण ने वैदिक मर्यादाओं को स्थापित करने का प्रयास किया। देश कौरव व पाण्डव दो दलों में बंटा था। राष्ट्रीय भावना के लोग पाण्डवों के साथ थे तथा विदेशी शक्तियां कौरवों के साथ थीं। तभी तो योगीराज ने पाण्डवों का पक्ष लेकर न केवल देश को सुरक्षित ही किया अपितु खण्डित देश को एक केन्द्रीय संगठन भी दिया। इस संगठन की कमान युधिष्ठिर को दी।

श्रीकृष्णजी की राजनीतिक सूझ इसी से प्रकट होती है कि वह राजनीति में दया के स्थान पर जैसे को तैसा के मार्ग पर चलाने वाले थे। यही वह कारण था कि जब कौरव सेना ने सभी लड़ाई के नियमों का उल्लंघन करते हुए बालक वीर अभिमन्यु का वध कर दिया तो कृष्ण ने उनके साथ वैसा ही व्यवहार करने का निर्देश देकर कुछ भी तो गलत नहीं किया। इसी नीति के माध्यम से ही तो कर्ण, भीष्म पितामह, अश्वत्थामा, कालयवन आदि यहां तक की अन्त में दुर्योधन को भी मार कर या पराजित कर अपनी अद्भुत राजनीति का परिचय दिया। यह ठीक भी है। राजनीति में पराजय का नाम मृत्यु है तथा जय का नाम है स्वर्गीक आनन्द। जीतना ही धर्म है और हारना अधर्म। यही कारण है कि जब संधि का संदेश लेकर श्रीकृष्ण कौरव दरबार में गए तो पहले से ही ऐसी तैयारी कर गए थे कि उनके साथ छल न होने पावे। स्वयं तो कौरव दरबार में खड़े थे किन्तु उनके रक्षकों ने पूरे क्षेत्र को घेर रखा था। जब कृष्ण जी के ओजस्वी विचारों ने कौरव दल के सभी लोग उनके पक्ष में आ गए तो दुर्योधन ने उन्हें हिरासत में लेने की सोची किन्तु दूरदर्शी कृष्ण जी की पहले से ही की हुई तैयारी यहां काम आई। धूर्त दुर्योधन उनका बाल भी बांका न कर सका।

यह कृष्ण जी की नीतियों का ही परिणाम था कि यह देश जो उस समय विदेशियों की गुलामी झेलने की अवस्था में पहुंच चुका था, उन्होंने अपने को सुदृढ़ कर न केवल इससे बचाया अपितु इसके लगभग चार हजार वर्ष बाद भी यह देश बचा ही रहा। आज जिस प्रकार हमारा भारत देश विदेशी उग्रवाद की चपेट में फंसा है ठीक इसी प्रकार ही मर्यादा पुरुषोत्तम राम के शासन से पूर्व तथा युधिष्ठिर के शासन से पूर्व भी उग्रवाद व विदेशी लोगों के कोप से ग्रसित था। राम व कृष्ण दो ऐसे महान नेता व राजनीतिकार इस देश को प्राप्त हुए। जिनकी सफल राजनीति ने उस समय के विदेशी उग्रवाद को समूल नष्ट कर एक ठोस व मजबूत केन्द्रीय सत्ता इस देश में स्थापित कर इस देश को ऐसी सुदृढ़ पृष्टभूमि दी कि फिर हजारों वर्षों तक उग्रवाद यहां अपना फन न उठा सका। आज ठीक वैसी ही अवस्था से देश निकल रहा है। प्रतिदिन यहां न केवल विदेशियों की घुड़कियां मिल रही हैं। इसके साथ ही साथ प्रतिदिन उग्रवादियों द्वारा किये जा रहे बम धमाकों, गोलियों आदि के कारण हजारों भारतीय मारे जा रहे हैं। हमारे राजनेता अपनी दलगत राजनीति में इतने उलझे हुए है कि देश के इस महान् संकट के समय भी एक होकर लड़ने के स्थान पर एक दूसरे को नीचा दिखाने का प्रयास कर रहे हैं। ऐसी अवस्था में देश की अवनति की ओर जाना निश्चित है। इसी का ही परिणाम है कि कहीं अतिवृष्टि हो रही है और कहीं अनावृष्टि कहीं तो किसी के गोदाम भरे हुए हैं तो किसी को दो जून का भोजन भी नहीं मिल रहा। सभी स्वार्थ के वशीभूत हो रहे हैं।

आज आवश्यकता ही नहीं बल्कि इस विदेशी प्रायोजित आतंकवाद पर काबू पाकर देश को ठोस आधार देने की है। यह तभी सम्भव होगा जब हमारे राजनेता श्रीकृष्ण जी की राजनीति को न केवल समझेंगे अपितु इसे व्यवहार में लायेंगे। यही ही एकमात्र हल है इस उग्रवाल के मुंह से देश को निकाल कर पुनः परम वैभव पर लाने का। आर्यसमाज ही एकमात्र संस्था है जो यह मार्ग वर्तमान स्वार्थी राजनेताओं को दिखा सकता है। अतः समाजियों को मजबूती से इस राजनीति को अपनाना चाहिए।

– आर्य कुटीर, 116, मित्र विहार, मंडी डबवाली, हरियाणा

कृष्ण जन्माष्टमी

तमस् में से रोशनी की ओर पग बढ़ते रहें,
हर वर्ष यह उपहार देती है कृष्णजन्माष्टमी।
भेदभावों को भुलाकर भद्रता भरते रहें,
समझा मधुर व्यवहार देती है कृष्णजन्माष्टमी।
गायें घर-घर में पलें, गौमात की सेवा करें,
गोपाल कर तैयार, देती है कृष्णजन्माष्टमी।
दूध, घृत, मक्खन दही खायें बनें बलवान सब,
शुद्ध शाकाहार देती है कृष्णजन्माष्टमी।
नारियों में भी कभी अश्लीलता आवे नहीं,
सादगी का सार देती है कृष्णजन्माष्टमी।
देश का हर नागरिक अब देश की सेवा करे,
नैया लगा भव पार, देती है कृष्णजन्माष्टमी।
सादगी, संयम, सदाचारी बनें सेवक सभी,
यह मनुज को प्यार देती है कृष्णजन्माष्टमी।
दुष्ट, दानव का दमन कर दीनता भी दूर हो,
कर राष्ट्र का उद्धार देती है कृष्णजन्माष्टमी।
धर्म से धन-धान्य जोड़ें 'धूम' सब धनवान हों,
बतला धर्म का सार, देती है कृष्णजन्माष्टमी।

– धूमसिंह शास्त्री

आज का तरूण दिग्भ्रमित तो नहीं?

❑ कृष्णमोहन गोयल

अखण्ड मण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः॥

उक्त मन्त्र में गुरु को नमन करने के लिए कहा गया है परन्तु यहां पर प्रश्न यह उठता है कि नमन किस गुरु को किये? क्या हर गुरु को नमन किया जा सकता है? नहीं, इसके लिए नमन करने वाले ने इसके साथ एक शर्त जोड़ दी है और वह शर्त यह है कि नमन केवल उस गुरु को ही किया जाये जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त परमपिता के चरणों के साक्षात् दर्शन करा दे और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त परमपिता के चरणों के साक्षात् दर्शन वही गुरु करा सकता है जो स्वयं भली भांति शिक्षित हो, मार्गदर्शित हो। यदि गुरु सत्य का मार्गदर्शन करने में असमर्थ है तो उस गुरु को नमन नहीं है।

शिक्षा मनुष्य को अहंकारी नहीं बनाती अपितु विनम्र बनाती है, उसे संस्कारवान बनाती है। यही वास्तविक शिक्षा का गुण है। विवेकशील और बौद्धिक शब्दों का प्रयोग न किया जाये तो हमारी शिक्षा में ही दोष आ जायेगा। परिणाम स्वरूप हमारे तरूण साक्षर तो हो रहे हैं परन्तु शिक्षित नहीं। साक्षर शब्द से तात्पर्य मात्र अक्षर ज्ञान से है जिनके संयोग से वह अपने विचार टूटी फूटी भाषा में व्यक्त कर सकता है। परन्तु वे संस्कारवान नहीं बन सकते हैं। वे चरित्रवान नहीं बन सकते हैं। वे विद्वान नहीं बन सकते हैं। वे अहंकारी हो सकते हैं। परन्तु शिक्षित व्यक्ति एक संस्कारवान, चरित्रवान, विद्वान और ज्ञानवान होता है। वह फलों से लदे वृक्ष के समान विनम्र होता है। आज के तरूण अपने माता-पिता, अपने से बड़ों और गुरूजनों का वे आदर सम्मान करना भूल रहे हैं। कारण हमारी शिक्षा ही अपने मूल उद्देश्य से भटक गयी है और हमारे तरूणों को संस्कारवान, चरित्रवान बनाने में बाधक सिद्ध हो रही है। आज चरित्र के अर्थ बदल गये हैं। आज चरित्रवान होने का प्रमाण पत्र भारतीय पुलिस द्वारा प्रदान किया जाता है। अब से कुछ वर्ष पूर्व एक भी विद्यालयों में अपने पूर्वजों, महापुरुषों, बलिदानियों के विषय में सोचने समझने का समय ही नहीं तो प्रेरणा कहां से मिलेगी और कौन देगा? इसी सन्दर्भ में आर्यजगत के विद्वान महात्मा हंसराज जी का कथन है-'संसार बिगड़ गया है, परिवार बिगड़ गया है, बच्चा बिगड़ गया है, देश बिगड़ गया है, जाति बिगड़ गयी है।' तो जब सब कुछ बिगड़ गया है तो सुधारने को रह ही क्या गया है?

प्राचीन काल में जब बालक पढ़ने के लिए गुरु के पास जाया करता था तो सर्वप्रथम गुरु द्वारा उसको दीक्षित किया जाता था उसके पश्चात शिक्षा दी जाती थी। वह गुरु के सम्मुख बैठकर मन्त्रोच्चारण करते हुए कहा करता था- 'मैं समित्पाणि होकर आचार्य के समीप उपनीत होने तथा विद्याध्ययन करने आया हूं। जिनके द्वारा मैं ज्ञान अर्जन कर तेजस्वी, कर्तव्यनिष्ठ बनूंगा।' परन्तु अब तो सरकार का उद्देश्य ही मात्र सभी को साक्षर करना है शिक्षित नहीं।

क्या स्वामी श्रद्धानन्द, स्वामी दयानन्द, स्वामी रामकृष्ण परमहंस भैतिक सुखों का आनन्द नहीं ले सकते थे? लेकिन नहीं, इन्होंने परमार्थ के लिए ही इस धरा पर जन्म लिया था। इन्होंने परमार्थ के लिए गुरुकुलों की स्थापना की थी। क्या स्वामी विवेकानन्द भौतिक सुखों के लिए सदैव के लिए शिकागो में नहीं रह सकते थे? क्या महात्मा गाँधी सदैव के लिए दक्षिण अफ्रीका में वकालत करते हुए भौतिक सुख प्राप्त करते हुए अपना जीवन व्यतीत नहीं कर सकते थे? मेजर ध्यानचन्द जो हाकी के जादूगर कहलाते थे जिनको हिटलर जर्मन की ओर से हॉकी खेलने के लिए जर्मनी में समस्त प्रकार के भौतिक सुख देने को तैयार था। परन्तु वे उस समय के तानाशाह हिटलर को ठुकरा कर भारत आ गये। नेता जी सुभाष चन्द बोस क्या अपना समस्त जीवन जापान में रह कर नहीं व्यतीत कर सकते थे? परन्तु ये सब लोग शिक्षित थे, संस्कारवान थे, चरित्रवान थे। इनको अपनी जन्मभूमि भारत से प्यार था। भगवान राम ने स्वयं अपने श्रीमुख से अपनी जन्म भूमि की प्रशंसा करते हुए लक्ष्मण से कहा था-

'अपि स्वर्णमयी लंका न रोचते मे लक्ष्मण,
जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।'

इसी श्रृंखला में हरगोविन्द खुराना, जयन्त नलिनीकर जैसे अनेक विद्वानों का नाम जोड़ा जा सकता है।

यह सर्वविदित है कि मानव को अन्य प्राणियों से अलग विशिष्ट पंक्तियों में इसलिए ही खड़ा किया जाता है वह एक 'सामाजिक' प्राणी है। श्रेष्ठ मानव की परिभाषा में वह ही उतरता है जो सामाजिक शब्द को अपने जीवन में उतारे। स्वामी विवेकानन्द जैसे महान व्यक्तित्व को इसीलिए श्रेष्ठ कहा जाता है क्योंकि उन्होंने अपने अल्प जीवन में समाज के मूल्यों को आदर सम्मान किया। यही कारण है कि महर्षिगण अपने संस्कारो वश अपनी मातृभूमि का त्याग नहीं कर पाते हैं और अपना सर्वस्व केवल मातृभूमि की सेवा के लिए ही अर्पित कर देते हैं। विश्वप्रसिद्ध हृदय रोग विशेषज्ञ डा, नरेश त्रेहन अमेरीका के समस्त वैभवों को त्याग कर भारत आ गये थे और उन्होंने भारत में चिकित्सा प्रारम्भ की। हमारे देश के वर्तमान प्रधानमन्त्री डॉ. मनमोहन सिंह हार्वर्ड विश्वविद्यालय के शिक्षक रह चुके हैं।

यहां हमारा आशय है आज का तरूण समुदाय अपना पारिवारिक, सामाजिक, सांस्कृतिक परिवेश छोड़कर जब विदेश में जाकर बस जाता है तो उसके माता-पिता की कौन देखभाल करेगा जो उम्र के चौथे सोपान पर होते हैं। जिनको एक कवच की आवश्यकता होती है। क्या किसी ने माता-पिता को अपने तरूण को लावारिस छोड़ते देखा है। यही भी कहा जाता है कि अप्रवासी होने के बाद 'वह न घर के रहे और न घाट के।' उनकी अगली पीढ़ी अपनी सांस्कृतिक पहचान के लिए तरसती है। क्या तरूण समुदाय का दायित्व नहीं बनता है कि वह अपने माता-पिता का उसी प्रकार पालन पोषण करें जैसे माता-पिता ने उनका किया है। ऐसी स्थिति की उपेक्षा क्यों? क्यों है आज का तरूण दिग्भ्रमित?

- 113, बाजार मोर, अमरोहा-244221

❑ उस मनुष्य का जीवन सफल है जो दूसरों से अपने दोषों को सुनकर क्रोध नहीं करे। दोष बताने वाले का उपकार माने कि जिससे दोष सुनने वाला मनुष्य अपने दोषों को दूर करके पाप करने से बचे। **-स्वामी दयानन्द**

सब कुछ परमात्मा के प्रकाश से चमक रहा है

❑ ओमप्रकाश आर्य

इस सृष्टि में दो प्रकार के पिण्ड हैं-स्वत: प्रकाशमान और परत: प्रकाशमान। आकार के आधार पर उनके भेद हैं- स्थूल और सूक्ष्म। लघु और विशाल। दो प्रकार के लोग हैं-जड़ और चेतन। नक्षत्र स्वयं प्रकाशमान पिंड हैं। जैसे-सूर्य। चन्द्रमा एवं अन्य ग्रह परत: प्रकाशमान हैं, उनमें स्वयं का प्रकाश नहीं है, वे सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित हैं। उसी प्रकार जो वस्तु दिखाई देती है वह स्थूल है और जो दिखाई नहीं देती-छोटा होने के कारण वह सूक्ष्म है। कुछ पिण्ड बहुत बड़े-बड़े हैं और कुछ छोटे-छोटे। जैसे-सूर्य सौरमंडल में सबसे बड़ा है, उससे भी बड़े-बड़े नक्षत्र हैं। चन्द्रमा छोटा है। पृथिवी भी छोटी है। कुछ चलने-फिरने वाले जीवधारी हैं। जैसे-मनुष्य, पशु-पक्षी, जीव-जन्तु आदि। कुछ अचर हैं। जैसे-वृक्ष, वनस्पतियां। इसके अलावा जड़ पदार्थ हैं-नदी, पहाड़, वायु, जल, अग्नि आदि। इन सबमें परमात्मा का प्रकाश व्याप्त है। सब उसी के प्रकाश से चमक रहे हैं। अथर्ववेद कहता है-

रोचसे दिवि रोचसे अन्तरिक्षे
पतङ्ग पृथिव्यां रोचसे रोचसे अप्स्वन्त:।
उभा समुद्रौ रूच्या व्यपिथ देवो देवासि महिष: स्वर्जित॥

- अथर्व. 13.02.30

अर्थ-"(पतङ्ग) हे ऐश्वर्यवान् (जगदीश्वर!) तू (दिवि) प्रकाशमान (सूर्य आदि) लोक में (रोच से) चमकता है। तू (अन्तरिक्षे) मध्य लोक में (रोचसे) चमकता है। तू (पृथिव्याम्) पृथिवी (अप्रकाशमान) लोक में (रोचसे) चमकता है। वह (अप्सु अन्त:) प्रजाओं (प्राणियों) के भीतर (रोचसे) चमकता है। (उभा) दोनों (समुद्रौ) समुद्रों (जड़-चेतन समूहों) में (रूच्या) अपनी रूचि (प्रीति) से (वि आपिथ) तू व्यापा है। (देव) हे प्रकाशस्वरूप (देव:) तू व्यवहार जाननेवाला (महिष:) महान् और (स्वर्जित) सुख का जितानेवाला (असि) है।"

परमात्मा से कोई स्थान खाली नहीं है। वह सर्वत्र सबमें व्याप्त है। इसीलिए उसका कण-कण में निवास बताया गया है। इस दृश्य-अदृश्य ब्रह्माण्ड में जितने लोक-लोकान्तर हैं उनमें उसी का प्रकाश है। सूर्य के प्रकाश से सौरमंडल प्रकाशित है किन्तु वह प्रकाश सूर्य में कहाँ से आया? अन्य जितने पिण्ड हैं जो स्वत: प्रकाशित हैं उनमें वह प्रकाश कहाँ से आया? वे किसके प्रकाश से प्रकाशित हो रहे हैं? निश्चय ही इसका संकेत परमात्मा की ओर जाएगा। असंख्य ब्रह्माण्ड हैं। आकाश अनन्त है। सबमें व्याप्त होने से परमात्मा भी अनन्त है। इसी बात को सामवेद कहता है-

"मृगो न भीम: कुचरो गिरिष्ठा: परावत आ जगन्था परस्या:।'

अर्थात् वह परमात्मा दूर दिशा और दूर देश में जाने पर भी प्राप्त होता है। कहने का आशय यह है कि आप किसी भी दिशा में चले जाओ, कितनी भी दूर चले जाओ, दूर देश, दूर दिशा में भी, वह वहाँ पहुँचा हुआ है। इस जगती में जितने भी जड़-चेतन प्राणी हैं उन सबमें वह व्याप्त हो रहा है। इसी व्याप्ति के कारण उसको सर्वव्यापक कहा गया है। प्रकाशस्वरूप होने के कारण व सबको प्रकाशित करने के कारण उसे देव की भी संज्ञा प्राप्त है। वह सब प्राणियों के हृदय में विद्यमान होने के कारण सबके व्यवहार को जानता है। मनुष्य जो कुछ सोचता है, करता है परमात्मा सबसे पहले उसको जान लेता है। अनुचित कार्य रोकने के लिए आत्मा को प्रेरित करता है। किन्तु लोग उसकी सूक्ष्म प्रेरणा की ओर ध्यान नहीं देते, उसकी मूक आवाज को नहीं सुनते और अनुचित कार्य कर डालते हैं। जो उसकी मूक आवाज को सुनता है, उसकी प्रेरणा को पहचानता है, ध्यान देता है, वह सदैव नेक कर्म करता है और उसके बताए मार्ग पर चलकर सर्वसुखों को प्राप्त करता है।

यदि लोग वेद के इस मन्त्र पर ध्यान दें और विचार करें तो ईश्वर के नाम पर मची भागदौड़ और सारी भ्रांतियाँ मिट जाएँ। जब वह सबके अन्दर विद्यमान है तो उसको अपने अन्दर क्यों नहीं देखते? क्यों बाहर की दुनिया में व्यर्थ के चक्कर लगाते हैं। धन नष्ट करते हैं और व्यर्थ के लड़ाई-झगड़े मोल लेते हैं। जो चीज अन्दर मिलनी है उसे बाहर खोजते हैं। यह अज्ञानता नहीं तो और क्या है? हम वेद की मानेंगे नहीं और निरर्थक उसके नाम पर अपने को ठगाते फिरेंगे। जरा आसमान की ओर मुंह करके तो देख लो। रात में तारों की दुनिया तो निहार लो। समुद्र की धारा को तो देख लो। पहाड़ों के पास खड़े तो जाओ। एक फूल की सुन्दरता तो देख लो। चित्र-विचित्र पक्षियों पर नजर तो दौड़ा लो। सूर्यास्त व सूर्योदय को तो देख लो। निश्चय ही उस परमात्मा का बोध होगा। उसके होने का प्रमाण मिल जाएगा। ये पदार्थ मूक भाषा में आपको बहुत कुछ परमात्मा के बारे में जानकारी दे देंगे। सबमें व्याप्त परमात्मा हँस रहा है। मूक भाषा में बोल रहा है। अपने मौजूद होने की कहानी कह रहा है पर हम उसको नहीं देखते। हम तो देखते हैं कौन सा मंदिर अच्छा है? कौन सी मूर्ति सुन्दर है? कहाँ पर अधिक संख्या में लोग जा रहे हैं? कहाँ पर जाने पर चमत्कार हो जाएगा? कौन-सी मूर्ति चमत्कार दिखा रही है? कहाँ पर कोई अजीबो-गरीब वस्तु दिखलाई पड़ेगी? बस परमात्मा के नाम पर यही सब हो रहा है। अन्ततोगत्वा मिलता कुछ नहीं है। अत: वेद की सुनो! वेद की मानो। वेद को पढ़ो। वेद को जानो। वेदानुसार चलो। तभी कल्याण होगा अन्यथा नहीं।

- आर्य समाज रावतभाटा, बाया कोटा (राजस्थान)

आवश्यक सूचना

आपका लोकप्रिय आर्य मर्यादाओं का समाचार पत्र "टंकारा समाचार" इंटरनेट एवम् वट्सअप पर उपलब्ध। सभी सदस्य पाठकों से अनुरोध है कि अपना ई-मेल पता एवम् वट्सअप मोबाइल नम्बर **9560688950** पर **सदस्य संख्या एवम् नाम सहित** भेजे ताकि हम पंजीकृत कर सके जिससे कि आपको उपरोक्त माध्यम से जोड़ा जा सके।

- ट्रस्ट मन्त्री एवम् सम्पादक

बोध-अग्नि आधान हो गया हृदय कुण्ड में

❒ देवनारायण भारद्वाज

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदाऽऽत्मानं सृजाम्यहम्।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे।।
जब जब होइधर्म की हानी। बाढ़े असुर और अभिमानी।
तब-तब प्रभुधरि मनुज शरीरा। हरहिं सकल सज्जन की पीरा।।

श्रीमद् भगवतगीता एवं श्री राम चरित मानस के यह यह अंश बहुत श्रुत हैं। धर्म जीवन का आधार और अभ्युदय साथ साथ प्रदान करता है। धर्म की छाया छटी नहीं कि अधर्म को अन्धेरी बढ़ी नहीं। मानव को यह सावधानी हटी नहीं कि दुर्घटना घटी नहीं। युग-युग में यह झंझावात मनुष्य को झेलना पड़ता है। चाहे श्री राम का युग हो चाहे श्री कृष्ण का युग हो अधर्म का अत्याचार अनाचार एवं व्यभिचार बढ़ता है तो परमात्मा को अपनी किसी मुक्तात्मा को भेजकर इस का परिष्कार व उद्धार करना पड़ता है।

ऐसी ही भीषण सन्तोषकारी आपद्दशाओं के मध्य अधर्म अज्ञान के ऊपर धर्म-ज्ञान की संस्थापना के लिए गुजरात प्रान्त के मौरवी राज्य स्थित ग्राम टंकारा में दीर्घ प्रतीक्षा के बाद माता यशोदा अमृताबेन एवं पिता कर्षन जी तिवारी के गृह में फाल्गुन कृष्ण दश भी सं. 1881 वि. को पुत्र का जन्म हुआ।

माता-पिता का हृदय हर्षातिरेक से परिप्लावित तो हुआ ही, परिवार एवं नगर भर में आनन्दोत्सव का वातावरण छा गया। पुत्र के जात कर्म, नामकरण आदि संस्कार और वर्ष गाँठ आदि उत्सव मनाये जाने लगे। इन शुभावसरों पर हृदय खोलकर दान-मान दक्षिणायें प्रदान की गयी। शैव मतानुयायी पिता बालक को मूलशंकर व मूलजी कह कर बुलाते। बालक को पाँच वर्ष की अवस्था में नागरी अक्षर का बोध कराया गया। परिवारी जन बालक को मन्त्र, श्लोक व उनके अर्थ कण्ठस्थ कराने में सुख का अनुभव करने लगे। सभी को उनकी बाल सुलभवाणी सुनकर हर्ष होता। बालक का आठवें वर्ष में समारोह यज्ञोपवीत संस्कार सम्पन्न हो गया। शिव महात्म्य की कथायें सुनाकर बालक को दृढ़ शैव बनाने का अभियान चल पड़ा। दस वर्ष के होते होते मूल शंकर पार्थिव शिवोपासना भी करने लगे। पिता तो बहुत चाहते थे कि मूल शंकर व्रत उपवास भी रखें, किन्तु माता के प्रतिरोध से वे बचे रहे, परन्तु शिव-शंकर महादेव की चमत्कारी कथा सुनकर चौदहवें वर्ष में मूलशंकर शिवरात्रि पर व्रत धारण एवं रात्रि जागरण के लिए समुद्यत हो गये।

टंकारा ग्राम के बाहर जड़ेश्वर महादेव के मन्दिर में उन्हें इस अनुष्ठान के लिए ले जाया गया। सुरीले कीर्तन व भजन गायन के संगीतमय वातावरण में पूजा पाठ व भोग प्रसाद शिव पिण्डी पर चढ़ाया गया। रात्रि के दो प्रहर तक तो सब जागते रहे, किन्तु तीसरे प्रहर में पिता-पुजारी-भक्तगण सभी सो गये। मूर्छापन्न अवस्था देखकर मूलशंकर को अचरज तो हुआ किन्तु उन्हें कोई निराशा नहीं हुई, क्योंकि सुनायी गयी काल्पनिक कथाओं के अनुसार उनके हृदय में शिव-दर्शन की आशा बलवती हो रही थी। नींद उनको भी आ रही थी, किन्तु जल के छींटे लगा लगाकर वे अपनी आँखो को महादेव के शुभागमन व दर्शन के निमित निरन्तर खोले रहे। हां, शिव पिण्डी पर एक हलचल अवश्य हुई जो मूषकों के उस चढ़ बैठने व उछल कुद कर पिण्डी पर पूजार्थ चढ़ाये गये फल-फूल-मिष्ठान को कुतरने व खाने के कारण थी। वे मूषक जन्तु खाने के साथ पिण्डी पर अपने मल मूत्र का विसर्जन करके दूषित भी करते जा रहे थे। यह दयनीय दृश्य देखकर शिव-दर्शन के प्रलोभन में सुनायी गयी काल्पनिक कहानियाँ उड़नछू हो गयी थी और वे अपने पिता जी को जगाकर शंका समाधान में जुट गये थे। पिता के उत्तर-प्रत्युत्तर से वे किंचित सन्तुष्ट न हुए और उन्होंने सारे बट्राज को यहीं छोड़कर मां के पास घर जाने का निश्चय कर लिया था। सिपाही के साथ पिता ने मूल शंकर को माता के पास भेजा तो दिया, किन्तु कुछ भी खाकर उपवास भंग न करने का कठोर निर्देश भी दे दिया। मां के समीप बालक जायें, मां उसे कुछ खिलाये नहीं और वह बालक जो प्रभात बेला से मध्य रात्रि तक भूखा रहा हो, उसे खिलाये बिना मां को चैन कैसे पड़ सकता है। माँ सान्त्वना के स्वर में बोल पड़ी। मैं जानती थी तू तो भूखा रह नहीं सकता था फिर भी अपनी हठ धर्मी करके तू ने यह उपवास रखा ले यह मिष्ठान भोजन और सो जा। उस रात्रि मूल शंकर ऐसे सोये जो प्रातः आठ बजे ही जग सके। उपवास अनुष्ठान भंग करने के कारण उन्हें पिता के कोप का भोजन तो बनना पड़ा, किन्तु **अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा** की यह मौन आहुति उनके मन में संकल्प की ज्वाला बनकर जाग उठी थी।

बाल्यकाल में मूलशंकर को जो यजुर्वेद का पाठ पढ़ाया गया था वही आज उनके जीवन में सार्थक होकर बोल रहा था। हे अग्ने हम भली भांति सो जायें, पर तुम भली भाँति जागते रहकर हमको अप्रमादित रखते हुए जगाते रहना। इसीलिए तो हमें ऋग्वेद की प्रथम ऋचा **''अग्निमीडे''** अर्थात् अग्नि की स्तुति वन्दना करते रहने की राह दिखाती है। प्रत्यक्ष प्रस्तुत भौतिक अग्नि हमें ईश्वराग्नि का पथ प्रशस्त करती है। ज्ञान-गमन्-प्राप्ति की जिवृती तरंगे बहाती है। शिवरात्रि जागरण का व्रत धारण करने सभी गाढ़ निद्रा में सो गये थे। अकेले मूल शंकर जागते दिखायी दे रहे थे, पर नहीं वहाँ कोई और भी जाग रहा था, वह था शिव मन्दिर का दीपक। यदि वही नहीं जागता तो अकेले मूलशंकर के जागते रहने से यह बोध क्रान्ति नहीं होने वाली थी, जिसने सम्पूर्ण विश्व को आलोड़ित किया। दीपक ने ही मूषकों के शिवपिण्डी पर दुरागमन कर दूषणकारी दृश्यों को दिखाया और उनके हृदय में बोध किरण को जाग्रत किया। दीपक रात्रि में सूर्य का प्रतिनिधि बनकर जलता है। सूर्य में परमेश प्रभु का ही प्रकाश दमकता है। शिष्य ने गुरुजी से दीपक जलाते समय प्रश्न किया यह ज्योति दीपक में कहां से आती है। गुरुजी की एक ही फूंक से दीपक बुझ गया और उन्होंने शिष्य से पूछा यह ज्योति कहाँ चली जाती है? तात्पर्य यह ईश्वर अदृश्य अन्तर्यामी से ही आती है और उसी में विलीन हो जाती है।

याज्ञिक यज्ञ करते समय सर्वप्रथम दीपक की ज्योति का आह्वान करते हैं, फिर इसी दीपक द्वारा हवन कुण्ड में अग्न्याधान करते हैं। ठीक इसी प्रकार शिव रात्रि जागरण की बेला में मूलशंकर के हृदय कुण्ड में देवालय के दीप ने बोध-किरण का अग्न्याधान कर दिया

था।'' **उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि**'' यजु. 15.54) हे यज्ञाग्ने तू भली भांति उद्धीप्त होकर उठ और समिधाओं को जैसे प्रज्जलित करती है वैसे ही मेरे मस्तिष्क की कोशिकायें (सीमन्त) दे दीव्य मानकर दे। दीपक अन्धकार को हरता, प्रकाश को फैलाता है। प्रकाश ज्ञान का प्रतीक है। दीपक अपनी लौ से असंख्य अन्य दीप जला देता है। नये दीपकों में ज्योति जग जाने पर भी पुरातन दीपक के प्रकाश में भी कोई कमी नहीं आने वाली है। दीपक की लौ सदा ऊपर को उठती है। दीपक को प्रकाश फैलाने के लिए स्वयं जलना पड़ता है। इस दीपक द्वारा किये गये अग्न्याधान से उत्पन्न बोध का उद्घोष प्रक्षेपणास्त्र के विष्फोट से भी भीषण होता है, प्रत्युत यह अन्तर्बोध का ही परिणाम होता है। मूलशंकर अगले सात वर्ष तक अपने पिता-परिवार के परिवेश में तो रहे, किन्तु अपने गृह त्याग एवं वैराग्य भाव को छिपा नहीं पाये। इसीलिए उनके विवाह बन्धन की तैयारी की जाने लगी, जो निरर्थक सिद्ध हो गयी, क्योंकि उन्होंने इसी ललित लावण्यमय उत्सव के मध्य सदा-सर्वदा के लिए स्वयंमेव महाभिनिष्क्रण अंगीकार कर लिया था।

हृदयकुण्ड के इस बोधाग्नि-अग्न्याधान के फलस्वरूप मूलशंकर उत्तरोत्तर ब्रह्मचारी शुद्ध चैतन्य, संन्यासी व महर्षि दयानन्द सरस्वती के अग्निधारण करते हुए अपनी दीप-वर्तिका से पण्डित गुरुदत्त, आर्य पथिक, पण्डित लेखराम महात्मा हंसराज, पण्डित श्यामजी कृष्ण वर्मा, स्वामी श्रद्धानन्द तथा अन्यान्य महादीपकों को जलाते हुए उनसठ वर्ष की आयु में दीपावली के असंख्य दीपकों की ज्योत्सना के मध्य लेखारम्भ में प्रस्तुत गीता एवं मानस के उद्वरणों की भूमिका का निर्वहन करते हुए परमेश प्रभु की उसी महाज्योति में जा मिले, जिसने उनको इस वसुधा पर भेजा था।

- वरेण्यम अवन्तिका-1, रामघाट मार्ग, अलीगढ़-202001, उ.प्र.

गिरने से मत डरिए

❒ डॉ. विजय अग्रवाल

यहाँ मैं आपसे एक ऐसी बात कहने जा रहा हूँ, जो हम सबसे जुड़ी हुई है और वह है-हारने की बात, पराजित होने की बात। यह बात है निराश होने की बात, किन्तु फिर भी उठकर खड़े हो जाने की बात।

मैंने बहुत सोचा लेकिन सफल नहीं हो सका। आप सोचकर देखिए शायद आप सफल हो जाएँ। आपको सोचना यह है कि क्या आप किसी भी एक ऐसे आदमी का नाम बता सकते हैं, जो अपनी जिन्दगी में कभी भी असफल नहीं हुआ हो। इसे आप यूँ भी कह सकते हैं कि क्या आप पैदल चलने वाले एक भी ऐसे व्यक्ति का नाम बता सकते हैं, जो कभी गिरा न हो। मैं तो किसी भी ऐसे आदमी के बारे में सोच नहीं पाया हूँ और मुझे उम्मीद है कि आप भी नहीं सोच पाएँगे, क्योंकि ऐसा कोई आदमी आपको मिलेगा ही नहीं और यदि आपको मेरी इस बात पर विश्वास हो रहा है, तो फिर आपको इस बात पर भी विश्वास हो जाना चाहिए कि आपके साथ भी यही होगा।

अक्सर होता यह है कि जब हम असफल हो जाते हैं, तो अन्दर से टूट जाते हैं। कुछ लोग तो इतने अधिक टूट जाते हैं कि उन्हें चारों तरफ अंधेरा ही अंधेरा दिखाई देने लगता है और वे सोच लेते हैं कि अब कुछ नहीं हो सकता, जबकि ऐसा होता नहीं है। एक बहुत अच्छी बौद्ध कहावत है कि **''चारों तरफ अंधेरा है तो कोई बात नहीं। बर्फ गिर रही है, तो कोई बात नहीं। सूरज फिर से निकलेगा, क्योंकि सूरज कभी मरता नहीं है।''**

यहाँ मैं आपके लिए एक ऐसी सच्ची कहानी प्रस्तुत कर रहा हूँ, जिसे सुनने के बाद शायद आप इस पर विश्वास न करें, लेकिन आपके इस पर विश्वास करना ही चाहिए, क्योंकि यह बहुत अधिक नहीं, बल्कि लगभग पौने दो सौ साल पुरानी ही बात है।

यह उस आदमी की कहानी है, जो 21 वर्ष की उम्र में व्यापार में असफल हुआ, 22 वर्ष की उम्र में चुनाव की दौड़ में हारा, 24 साल की उम्र में फिर से व्यापार में असफल हुआ, 26 साल की उम्र में उसकी प्रेमिका की मृत्यु हो गई, 27 साल की उम्र में उसे नर्वस ब्रेकडाउन हो गया। 34 साल की उम्र में वह संसद के चुनाव में हारा, 36 साल की उम्र में फिर हारा, 45 साल की उम्र में एक बार फिर सीनेटर बनने से वंचित रहा और 52 वर्ष की उम्र में वह अमेरिका का राष्ट्रपति चुन लिया गया। इस शख्स का नाम था-अब्राहम लिंकन।

कभी-कभी तो यह भी कहा जाता है कि असफलताएँ जितनी बड़ी होंगी, सफलताएँ भी उतनी ही बड़ी मिलेंगी। घुड़सवार ही घोड़े पर से गिरा करते हें, घुटनों के बल चलने वाले नहीं।

महत्वपूर्ण बात यह नहीं होती कि वह गिरा की नहीं। महत्वपूर्ण बात यह होती है कि वह गिरकर उठा कि नहीं। और यदि गिरकर उठा, तो उठने में समय कितना लगाया, क्योंकि यही उस बात का निर्धारण कर देगा कि वह कितने समय बाद सफल होगा। जो जितनी जल्दी उठ जाएगा, वह उतनी जल्दी सफल भी हो जाएगा। यही इस प्रकृति का नियम है और इसी नियम को आत्मसात करके हमें अपनी जिन्दगी के इस सफर को जारी रखना है। इससे हमें निराशा नहीं होगी और हमारी यह यात्रा जारी रह सकेगी।

वेद ज्योति

युजे वां ब्रह्म पूर्व्य नमोभिर्वि श्लोक एतु पथ्येव सूरेः।
शृण्वन्तु विश्वे अमृतस्य पुत्रा आ ये धामानि दिव्यानि तस्थुः॥ 11/5

भावार्थ- परम कृपालु परमात्मा, अपने भक्तों पर कृपा करते हुए कहते हैं-हे अमृत के पुत्रो! मेरे वचन को बड़े प्रेम से सुनो। आप लोग मुझको बारम्बार नमस्कार करते और मेरा ही मन में ध्यान धरते हो, इस लोक में कीर्ति और शान्ति को प्राप्त हो। मोक्ष के अनन्त दिव्य सुख भी, आप लोगों के लिए ही नियत है, उनको प्राप्त होकर सदा आनन्द में रहो।

YAGYA: A Holistic Approach to Public Health

❑ **Arun Kumar Gupta**

Today`s extraordinary progress in the field of science, coupled with government claims regarding various deadly diseases in the country, highlights a growing concern. Diseases such as plague, tuberculosis, leprosy, swine fludengue, malaria, viral fever; AIDS skin diseases, heart diseases, causig global distress that escalates daily. The root causes of these issue include filth, poverty, overpopulation, industrialization, opulence, short-sighted plans, impractical policies, lack of mutual coordination and the absence of a strong will.

Amid these challenges, Yagya, grounded in the Vedic thinking of Indian sages is becoming increasingly vital for the human community. With the context of the Vedas, Yagya is considered the lifeblood of Vedic culture and Ayurveda. The Vedas state that Yagya is the highest form of life`s work, necessitating a scientific perpective beyond mere ritual. Yagya therapy or Yagya, is crucial for preventing various diseases, purifying both physical and mental environments and fulfilling desires. The practice of Yagya serves to reduce pollution and spiritually purify the atmosphere. Beyond this spiritual aspect, Yagya has a Vedic, Philosophical and scientific method for neutralizing widespread diseases by eliminating viruses, bacteria, and fungi that affect physical health and various body organs.

In modern medicine, treatments are administered through injections, intravenous, subcutaneous, and muscular methods. However, Vedic Yagya theraphy provies a unique approach, delivering treatments through subtle air that permeates the body. The scientific basis of Yagya hinges on the transformation of substances by fire, making them millions of times more subtle. Experimentally, a red chili is not inherently very hot, but when burned, its effect spread extensively.

Numerous foreign researchers and scientists have affirmed as well as also demostrated fire`s miniaturization power. They proved the atmospheric purity achieved by burning ghee and the smoke of rice and saffron. This experiment laid the ground work for Yagya therapy. When substances are added to the fire during Vedic Yagya, they transform form a gross to a subtle form. This process atomizes the burning substances, purifying them along with the air and water, impacting hundreds of people simultaneously.

According to them, the speed at which gases expand at a certain temperature and pressure is inversely proportional to the square root of their density. This means that lighter gases mix more quickly in the air. The Atharvaveda states, "Swaha Kriteurghavanmrasam Marutam Gachchatam," indicating that by offering Swaba in the Yagya, the air spreads in the sky. This principle demostrates how sustances burned in the become fine particles, eliminating bad odours and protecting the body from various bacteria once inhaled.

Yagya, therefore, has profound implications for environmental and public health. By performing Yagya, not only are spiritual and atmospheric benefits achieved, but it also supports a holistic approach to health and well-being. The practice purifies the air, making it cleaner and healthier to breathe, thereby reducing the spread of airbone diseases. Moreover, Yagya`s impact on mental health cannot be over stated. The ritualistic and meditative aspects of Yagya provide a sense of calm and clarity, contriuting to better mental health and stress reduction.

Furthemore the pratice of Yagya fosters community bonding and collective consciousness. When people gather to perform Yagya. it creates a sense of unity and shared purpose. The communal aspect enhances social cohesion and collective efforts towards a healtheir environment and society. In a world where individualism often takes precedence, Yagya serves as a reminder of the power of collective action and shared spiritual practices.

The Ingredients used in Yagya, such as ghee, milk, grains, cakes, soma, clarified butter, barley, sesame seeds, sugar, saffron, camphor, guggual, cedar, sandal, coconut and jaggery, also have intrinsic medicinal properties recognized in Ayurveda, Ghee, for instance, is known for tis anti-inflammatory properties and ability to nourish and lubricate the body`s tissue. saffron has been used for centuries in traditional medicine for its antioxidant and anti-depressant qualities. When these substance are offered in the fire, their healing properties are believed to be magnified and dispersed into the environment, providing holistic health benefits.

The resurgence of Interest in traditional practices like Yagya is a response to the limitations and side effects of modern medicine. While modern medicine has made remarkable advancements, it often focuses on treating symptoms rather than addressing the root cause of diseases. Yagya, on the other hand, aims to restore balance and harmony within the body and the environement, aligning with the principles of holistic health.

Moreover, Yagya aligns with sustainbale practices, as it relies on natural ingredients and methods. Unlike industrial processes that contribute to pollution and environmental deradation, Yagya is an eco-friendly practice that supports environmental sustainability. The materials used in Yagya are biodegradable and do not leave harmful resideus, making it a green alternative to many contemporary practices.

(Remain on Page No. 14)

દયાનન્દ સરસ્વતી અને ગુજરાતમાં આર્યસમાજની ચળવળ (ભાગ -2)

મૂળ લેખકઃ જગદીશ એમ પંડ્યા **સમ્પાદનઃ રમેશચન્દ્ર મહેતા**

સ્વામી દયાનન્દે પોતાના ગૃહત્યાગ પછી દેશના પરિભ્રમણ દરમ્યાન જે જે જોયું અને અનુભવ્યું હતું તેના પરિપાક રૂપે પોતાના ઉપદેશો અને પ્રવચનોમાં કુરિવાજો અને અંધશ્રદ્ધા વિગેરે પર પ્રહાર કર્યા હતા. એટલે જ આર્યસમાજની સ્થાપના પછી સમાજમાં જાગૃતિ લાવી એ બધા દૂષણોને દૂર કરવા માટે જે ભગીરથ પ્રયાસ કર્યા છે તે વિષયે સંક્ષિપ્તમાં ચર્ચા કરવી અનિવાર્ય છે. આપણો સમાજ કયા કયા કુરિવાજોમાં ફસાયેલો હતો અને આજે આ આર્યસમાજના પુરુષાર્થના પરિણામે સમાજ વાસ્તવિકરૂપે વિકાસની કઈ દિશામાં પહોંચી ગયો છે તેનું વાસ્તવિક રૂપ આપણે જોઈએ.

જે સમયે સ્વામી દયાનન્દ સરસ્વતીજીનો જન્મ થયો હતો તે સમયે સમાજમાં અનેક સામાજિક દૂષણો વ્યાપ્ત હતા. સમાજ અનેક જાતિઓ, ઉપજાતિઓમાં વહેંચાયેલો હતો. જાતપાતના આ રાક્ષસે સમાજની એકતાને વિખંડિત કરી નાખી હતા. સમાજમાં આભડછેટના રિવાજો એટલા બધા ઘર કરી ગયા હતા કે તેના કારણે સમાજમાં જાતિ - જાતિઓ વચ્ચે સંઘર્ષની સ્થિતિ પેદા થઈ ગઈ હતી, તો બીજીબાજુ બાળવિવાહને કારણે સમાજમાં વિકૃતિઓ આવી ગઈ હતી.પરિણામે બાળવિધવા અને નારીશોષણ જેવા દૂષણો ઘર કરી ગયા હતા. તદોપરાંત ઘુંઘટપ્રથા, અને દહેજ પ્રથા જેવા દૂષણોને કારણે નારીની સ્વતંત્રતા પર ગુલામીનો સીક્કો વાગી ગયો હતો. આર્યસમાજે જાતિ પ્રથા, બાળવિવાહ, ઘુંઘટપ્રથા અને દહેજ પ્રથાનો જોરદાર વિરોધ કર્યો અને એ દૂષણોની વિરુદ્ધમાં સચોટ દલીલો, અને શાસ્ત્રીય પુરાવાઓને આધારે સમજાવ્યું કે મનુષ્યમાં કોઈ જ ઊંચ કે નીચ નથી. બધાને પોત-પોતાના ગુણ, કર્મ અને સ્વભાવના આધારે યોગ્ય સ્થાન મળવું જ જોઈએ. સહુ કોઈને આર્યસમાજે પોતાના સંગઠનમાં કોઈ જ ભેદભાવ વિના સ્થાન આપવાનું ચાલુ કર્યું.

એ વાતનું પણ ધ્યાન રાખ્યું કે ઘુંઘટ અને દહેજ પ્રથા નારીની સ્વતંત્રતામાં બાધક છે. આમાંથી છુટકારો અપાવવા માટે નારી શિક્ષણ પર જોર આપ્યું. અનેકાનેક પ્રયત્નો નારી શિક્ષણક્ષેત્રે કરવામાં આવ્યા. દેશમાં અનેક સ્થલો પર કન્યાવિદ્યાલયો અને કન્યા ગુરુકુળોની સ્થાપના કરવામાં આવી. અહીં સ્ત્રિઓને જનોઈ ધારણ કરીને વેદાદિનું શિક્ષણ પ્રાપ્ત કરવાનો અધિકાર આપવામાં આવ્યો. આજે દેશમાં આર્યસમાજના કન્યા વિદ્યાલયો અને કન્યા ગુરુકુળો હજારોની સંખ્યામાં સક્રિય છે.

અછુતોના ઉદ્ધાર માટે આધુનિક સમયમાં સહુ પ્રથમ અને સહુથી વધારે પુરુષાર્થ આર્યસમાજે કર્યો છે. આર્યસમાજ અસ્પૃશ્યતાને હિંદુ સમાજનું કલંક માને છે. આર્યસમાજે પોતાના ગુરુકુળોમાં કહેવાતા અસ્પૃશ્ય સમાજના બાળકોને પણ પ્રવેશ આપીને તેઓને વેદાદિ શાસ્ત્રોના પારંગત બનાવ્યા છે. આજે કહેવાતા અસ્પૃશ્ય સમાજના યુવાનો ગુરુકુળોમાંથી સ્નાતક બનીને વેદાદિ શાસ્ત્રો પર સાર-ગર્ભિત પ્રવચોનો આપી રહ્યા છે.

સ્વામી દયાનન્દ જન્મના ગુજરાતી હોવા છતા હિંદીને રાષ્ટ્રભાષા બનાવવાનું આંદોલન પ્રારંભ કર્યું. તેમને રાષ્ટ્રભાષા હિંદી માટે કેટલો બધો પ્રેમ હતો તે એ વાત પરથી સમજાય છે કે તેઓએ પોતાનું ક્રાન્તિકારી પુસ્તક "સત્યાર્થ પ્રકાશ" હિંદીમાં જ લખ્યું. તેમનો મુખ્ય ઉદ્દેશ્ય હતો કે દેશમાં રાષ્ટ્રભાષા તો હિંદી જ હોવી જોઈએ. માત્ર હિંદીભાષા જ સમગ્ર દેશને એક સૂત્રે બાંધી શકે. સ્વામીજીએ હિંદીને રાષ્ટ્રભાષાનો દરજ્જો અપાવવાનું આંદોલન એ સમયે પ્રારંભ કર્યું હતું જ્યારે દેશમાં અંગ્રેજોનું શાસન હતું. દુર્ભાગ્યે આજે આપણી સ્વદેશી સરકારમાં પણ એ કામ નથી થઈ શક્યું.

જ્યારે ભારતની પ્રજા અંગ્રેજોની ગુલામીમાં શ્વાસ લઈ રહી હતી ત્યારે સ્વામી દયાનન્દે સ્વારજ્ય, સ્વદેશી, દેશપ્રેમ રાષ્ટ્રીયતા અને દેશભક્તિ માટે પુરુષાર્થ કરવાના આંદોલનનો પ્રારંભ કર્યા હતો. દેશની અન્ય સામાજિક કે ધાર્મિક સંસ્થાઓ આવા આંદોલનોથી દૂર રહી છે.

તેઓએ દેશની સ્વતંત્રતાનો પ્રબળ પક્ષ લીધો, તેઓશ્રી કહેતા કે 'સુરાજ્ય' ક્યારેય 'સ્વતંત્રતા'નું સ્થાન ન લઈ શકે. તેઓ સ્વદેશી શાસનને સર્વોપરી અને સર્વોત્તમ માનતા હતા. તેઓ ભારતને સંસારનો સર્વશ્રેષ્ઠ દેશ માનતા હતા. ભારતની દુર્દશા અને પરાધીનતાથી તેઓ ઘણા ચિંતિત હતા. તેઓએ સ્વરાજ્ય, સ્વદેશી અને રાષ્ટ્રીય સંસ્કૃતિ પ્રત્યે ગૌરવની ભાવનાનો સંદેશ ભારતીયોને આપ્યો હતો. તેમની વિચારણામાંથી પ્રેરણા મેળવીને હજારો નર-નારી ભારતની સ્વાધીનતા માટે પોતાનું વર્ચસ્વ ન્યોછાર કરવા માટે તૈયાર થઈ ગયા હતા, આજે એ કારણે જ ભારત સ્વતંત્ર છે. દેશની આઝાદીમાં આર્યસમાજ તથા આર્યસમાજિઓનું યોગદાન ભૂલી શકાય તેમ નથી. અનેક આર્યસમાજિઓએ મહાત્મા ગાંધીના નેતૃત્વમાં પ્રારંભ કરવામાં આવેલા અસહકાર તથા સત્યાગ્રહ આંદોલનમાં સક્રિયરીતે ભાગ લીધો હતો. રાજાર્ય સભા અને આર્ય સભા જેવા અનેક સંગઠનો બનાવ્યા હતા. એટલું જ નહીં, વીસમી સદીના પ્રથમ ચરણ સુધી પંજાબ અને સંયુક્ત પ્રાંત (ઉત્તર પ્રદેશ) માં આર્યસમાજના કેન્દ્રોએ રાજનૈતિક ક્ષેત્રમાં મહત્ત્વપૂર્ણ યોગદાન આપ્યું છે.

पुनर्जन्म एवं ऋग्वेद

❒ श्री शिव नारायण उपाध्याय

सामान्य रूप से वैदिक संस्कृति में कर्मफल की स्वीकारता है। मनुष्य के प्रत्येक कर्म का उसे उतना ही प्रतिफल अवश्य ही प्राप्त होता है, जीव कर्म करने में तो स्वतन्त्र है परन्तु उसका फल प्राप्त करने में ईश्वर की व्यवस्था में परतन्त्र है।

मनुष्य जो कर्म करता है उनमें से कुछ का उपभोग को वह वर्तमान जीवन में ही प्राप्त कर लेता है परन्तु कुछ कर्मों का फल प्राप्त करना शेष रह जाता है। यही उसका प्रारब्ध बनाता है।

चूंकि मृत्यु के समय तक वह कई कर्मों का फल नहीं भोग पाया था, अत: उस कर्म-फल को भुगताने के लिए ही परमेश्वर की व्यवस्था से उसे दूसरा जन्म धारण करना होता है।

वेदान्त दर्शन के अनुसार प्रारब्ध के कारण ही उसे पुनर्जन्म में चार उपलब्धियां स्वत: प्राप्त हो जाती हैं- परिवार, आयु, भोग और यश।

मृत्यु के बाद जीवात्मा अपने सूक्ष्म शरीर में प्राणमय, मनोमय और विज्ञानमय कोष के साथ रहता है। प्राणमय कोष क्रियात्मक विभाग है। क्रिया शीलता इसी कोष से प्रारम्भ होती है। मनोमय कोष द्वारा आत्मा में भाव उठते हैं। इन्हीं भावों से प्रेरणायें उठती हैं। विज्ञानमय कोष संस्कारों को ज्ञान में परिवर्तित करने का कार्य करता है। मृत्यु के बाद पहले जीवात्मा अपने सूक्ष्म शरीर में हुई क्षति की पूर्ति करता है फिर वायु, जल, अन्न आदि में से किसी के द्वारा पिता के शरीर में प्रवेश करता है ऐतरेय उपनिषद् में इसका वर्णन इस प्रकार है-

पुरुषो ह वा अयमादितो गर्भो भवति।
यदेतद्रेतस्तदेतत्सर्वेभ्योङ्-गेभ्यस्तेज:
सम्भूतमात्मन्येव आत्मानं बिभर्ति तद्यदा
स्त्रियां सिञ्चत्यथैनज्जनयति तदस्य प्रथमं जन्म॥ ऐत. 2.1॥

वास्तव में पुरुष गर्भ को पहले धारण करता है। वीर्य से ही तो गर्भ होता है। यह वीर्य पुरुष के अंग-अंग के तेज का ही तो सार तत्त्व है। क्योंकि पुरुष के अंगों के तेज से ही गर्भ होता है तो यह कहना ठीक ही है कि पहले पुरुष वीर्य रक्षा द्वारा अपने को धारण करता है। उसे जब स्त्री में सिञ्चित करता है तो अपने को ही उत्पन्न करता है। यह उसका पहला जन्म है। विषय को आगे बढ़ाते हुये उपनिषद् कहता है-

तत् स्त्रिया आत्मभूयं गच्छति यथा स्वमङ्गं तथा।
तस्मादेनां न हिनस्ति साऽस्यैतमात्मानमत्र गतं भावयति॥ ऐत. 2.2॥

वह रेतस् स्त्री में जाकर उसका आत्मवत् हो जाता है, ठीक ऐसे ही जैसे अपना अंग। इसलिए विजातीय द्रव होने के कारण भी आत्मवत् हो जाने से वह स्त्री को कष्ट नहीं देता। स्त्री पुरुष के आत्मा को अपने भीतर सुरक्षित रखकर उसकी पालना करती है। अगले श्लोक में कहा गया है कि क्योंकि वह हमारी ही पालना करती है अत: उसकी पालना करना भी हमारा कर्तव्य है। स्त्री पुरुष को ही गर्भ में धारण करती है। जन्म के बाद पुरुष 'कुमार' की रक्षा करता है। इस प्रकार वह लोक में अपनी सन्तति को बढ़ाता है। अब ऋग्वेद के आधार पर पुनर्जन्म पर विचार करते हैं।

अयं देवाय जन्मने स्तोमो विप्रेभिरासया। अकारि रत्नधातम:॥ ऋ.1.20.1॥

स्वामी दयानन्द सरस्वती के अनुसार इस मन्त्र में पुनर्जन्म का विधान जानना चाहिए। मनुष्य जैसे कर्म किया करते हैं वैसे ही जन्म और भोग उनको प्राप्त होते हैं।

सं माग्ने वर्चसा सृज सं प्रजया समायुषा।
विद्युर्मे अस्य देवा इन्द्रो विद्यात् सह ऋषिभि:॥ ऋ. 1.23.24॥

पदार्थ- मनुष्यों को योग्य है कि जो ऋषिभि:=वेदार्थ जानने वाले के सह=साथ देवा:=विद्वान लोग और इन्द्र:=परमात्मा अग्ने=भौतिक अग्नि वर्चसा=दीप्ति प्रजया=सन्तान आदि पदार्थ और आयुषा=जीवन से मा=मुझे संसृज्ञ=संयुक्त करता है उस और मे=मेरे अस्य=इस जन्म के कारण को जानते और विद्यात्=जानता है इससे उसका संग और उपासना नित्य करें।

भावार्थ- जब जीव पिछले शरीर को छोड़कर अगले शरीर को प्राप्त होता है तब उसके साथ जो स्वाभाविक मानस अग्नि जाता है वही फिर शरीर आदि पदार्थों को प्रकाशित करता है जो जीवों के पाप पुण्य और जन्म के कारण हैं उनको विद्वान ही परमेश्वर के अतिरिक्त जानते हैं परन्तु परमेश्वर तो निश्चय के साथ यथा योग्य जीवों के पाप वा पुण्य को जानकर, उनके कर्मों के अनुसार शरीर देकर पुन: सुख-दु:ख का भोग कराता है।

कस्य नूनं कतमस्यामृतानां मनामहे चारु देवस्य नाम।
को नो मह्या अदितये पुनर्दात् पितरं च दृशेयं मातरं व॥ ऋ 1.24.1

भावार्थ- इस मन्त्र में प्रश्न का विषय है कि कौन पदार्थ है जो सनातन पदार्थो में भी सनातन अविनाशी है कि जिसका अत्यन्त उत्कर्ष युक्त नाम का स्मरण करे वा जाने और कौन देव हम लोगों के लिए किस किस हेतु से एक जनम से दूसरे जन्म का सम्पादन करता और अमृत व आनन्द के कराने वाली मुक्ति को प्राप्त होकर भी हम लोगों को माता-पिता से दूसरे जन्म से शरीर धारण कराता है। ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 154 के सभी 5 मन्त्रों में मृत्यु के बाद श्रेष्ठ जीव को दूसरे जन्म में कैसा परिवार मिलना चाहिए इस बात की कल्पना की गई हैं।

ये युध्यन्ते प्रधनेष शूरासो ये तनूत्यज:।
ये वा सहस्रदक्षिणास्ताँश्चिदेवापि गच्छतात्॥ ऋ. 10.154.3॥

पदार्थ- शूरास:=बलवान् ये= जो लोग प्रधानेषु=संग्रामों में युध्यन्ते=युद्ध करते हैं ये= जो तनूत्यज:=शरीर को छोड़ने वाले होते हैं वा=और ये=जो सहस्र दक्षिणा=सहस्त्रों का दान करने वाले होते हैं। हे जीव! तू जन्मान्तर में इन्हें भी प्राप्त हो।

भावार्थ- हे जीव! तू अगले जन्म में ऐसे परिवार में जन्म ले जिनमें ऐसे व्यक्ति हों जिन्होंने धर्म युद्ध में प्राण त्यागा हो। तुम ऐसे परिवार में भी जन्म लो जिनमें सहस्त्रों का दान करने वाले लोग रहते हो।

ये चित् पूर्व ऋतसाप ऋतावान ऋतावृध:।
पितृन् तपस्वतो यम ताँश्चिदेवापि गच्छतात्॥ ऋ 10.154.4॥

पदार्थ- ये चित्= जो पूर्वे=ज्ञान पूर्ण ऋतसाप:= सत्य को मानने वाले ऋतावान:= यज्ञ करने वाले और ऋतावृध:= सत्य का प्रचार और प्रसार कर उसे बढ़ाने वाले हैं तपस्वत:= तपोनिष्ठ तान्= उन पितृन चित् अपि= जीवित माता पिता को भी यम=हे जीव! तू पुन: गच्छतात्=प्राप्त हो।

भावार्थ- जो पूर्ण ज्ञानी, सत्य को मानने वाले, यज्ञ करने वाले, सत्य को बढ़ाने वाले, तपोनिष्ठ जीवित माता-पिता हैं। हे जीव! तू पुन: उनको भी प्राप्त हो।

सहस्त्रणीथाः कवयो ये गोपायन्ति सूर्यम्।
ऋषीन तपस्वतो यम तपोजाँ अपि गच्छतात्।। ऋ. 10.151.5।।

पदार्थ- सहस्त्रणीथाः=सहस्त्रों प्रकार की दृष्टियों वाले कवयः= क्रान्तदर्शी ये=जो सूर्यम्=परमेश्वर को गोपयन्तिः=अपने ज्ञान और कर्म में सुरक्षित रखते हैं। यम=हे जीव! तपोजान्=तप में प्रसिद्ध तपस्वतः=तपस्वी ऋषीन्=ऋषियों को अपि= भी गच्छतात्=पुनः प्राप्त हो।

भावार्थ- सहस्त्रों दृष्टियों वाले, ज्ञानदर्शी, परमात्मा को सदा अपने ज्ञान और कर्म में सुरक्षित रखते हैं। हे जीव! तू तप से प्रसिद्ध तपस्वी उन मन्त्र द्रष्टा लोगों को पुनः प्राप्त हो।

जन्मन्जन्मन् निहितो जातवेदा विश्वामित्रेभिरिध्यते अजस्त्रः।
तस्य वयं सुमतौ यज्ञियस्याऽपि भद्रे सौमनसे स्याम।। ऋ. 3.1.21।।

पदार्थ- हे जीव! परमेश्वर ने जन्मन्जन्मन्=जन्म जन्म में निहितः= कर्मो के अनुसार संस्थापक किया है। जातवेदाः=उत्पन्न हुए पदार्थो में न उत्पन्न हुए समान वर्तमान विश्वामित्रेभिः= समस्त संसार जिसका मित्र उन सज्जनों से अजस्रः=निरन्तर इध्यते=प्रबोधित कराया जाता तस्य=उसे यज्ञियस्य= यज्ञ के योग्य होते हुए प्राणी को सुमतौ= प्रशंसित यज्ञ में और भद्रे=कल्याण करने वाले व्यवहार में तथा सौमनसे=सुन्दर मन के भाव में अपि= भी हम लोग स्याम= होवें।

भावार्थ- सब मनुष्यों को प्रसिद्ध जगत् में सुख-दुःख सञ्चित कर फल का देने वाला न हो तो व्यवस्था भी प्राप्त न हो। इसलिए सबको श्रेष्ठ बुद्धि उत्पन्न कर वैर आदि को छोड़कर सबके साथ सत्य भाव से वर्तना चाहिए। ऋग्वेद में इनके अतिरिक्त भी कई मन्त्र हैं जो पुनर्जन्म का समर्थन करते हैं परन्तु हम इस विषय को आगे न बढ़ाकर यहीं विराम देना पसंद करेंगे।

दोषी कौन, नर या नारी

❐ कृष्णलाल अग्रवाल

आर्य समाज के निर्माता देव दयानन्द जी ने जब नारी की दयनीय दुर्दशा को देखा, इसका पुरुष प्रधान समाज द्वारा भरपूर शोषण हो रहा था, इसे वेद पढ़ने का अधिकार नहीं था। इसके विधवा हो जाने पर इसका पुनः विवाह नहीं होता था। यह बाल्यावस्था में ही रात के अंधेरे में विवाह दी जाती थी। तो स्वामी जी को इसकी चिन्ता व्यापी। उन्होंने इसे शिक्षित कराने हेतु, गुरुकुलों की एवं अन्य शिक्षा संस्थानों की रचना कराई। इन्हें वेद का उपनिषदों का ज्ञान विज्ञान प्राप्त कराया। यह आर्य समाज के मंचों से वेद मन्त्रों का उच्चारण करके इनकी व्याख्या करने वाली बनी। जीवन के 16 संस्कारों को विधिवत परिवारों में समापन कराने वाली बनी। निराकर ईश्वर का बोध कराने वाली बनी। विदेशों में भी गई और आर्य समाज का प्रचार प्रसार करने वाली बनी। भारत की अतीत की उज्ज्वल संस्कृति को जो यवन काल की सात सौ वर्षो की अधीनता में लुप्त हो गई थी, उसका पुनः अवलोकन कराने वाली बनी। परन्तु आज हमारे बहन भाईयों ने इस नारी की सुन्दर सात्विक छवि को धूमिल बनाना प्रारंभ किया है। यह इन आज के नये भगवानों, बापुओं एवं जगत् गुरुओं के प्रवचनों में नाचने लगी है। वह प्रवक्ता भी इन्हें ऐसा करने के लिए मना नहीं करते हैं। आर्य समाज के आयोजनों में ऐसा कभी नहीं होता है। वहां पर तो वेद मन्त्रों की तर्क संगत व्याख्या होती है। परन्तु आज यह नारी लक्ष्मण रेखा का उलंघन कर अपनी आर्थिक प्राप्ति की लालसा से मॉडल एवं मिस इंण्डिया और मिस वर्ल्ड की प्रतियोगिताओं में शामिल होकर अपना अंग प्रदर्शन कराने लगी हैं। आज नारी स्वयं अपना शोषण करने लगती है। दूरदर्शन एवं मीडिया भी अपने आर्थिक लाभ हेतु नारी की इस कमजोरी का फायदा उठा रहा है। फिल्मों में भी नारी अपना अंग प्रदर्शन करने वाली बनी है। पुरुष का भी दोष बनता है, वह नारी की सुन्दर सात्विक छवि से उसे पथ विचलित करा रहा है। स्वामी दयानन्द जी परदा के हामी नहीं थे, वह तो कहते थे कि बेटी तुम अपने मुख पर बिना आवरण के मार्ग पर चलो तुम्हें कहीं गिरना नहीं पड़े। अब दोषी कौन है? मैंने तो अपने विचार आपके समक्ष रख दिये हैं, निर्णय आपने लेना है।

– डी-322 (प्रथम तल), फेज-1, विवेक विहार, दिल्ली-95

(Matter of Page No. 11)

Incorporating Yagya into modern life can also serve as an educational tools for younger generations. It teaches them about the importance of maintaining a balanced ecosystem and respecting ancient wisdom that has withstood the test of time. This practice encourages mindfulness about the envirnment and fosters a deeper connection to nature and its presevation. Yagya`s role in mitigating environmental issues is not just theoretical but has practical applications. For instance, the smoke from Yagya has been shown to act as a natural insect repellent, reducing the presence of disease-carrying mosquitoes. This is particularly relevant in areas plagued by malaria and dengue. Additionally, the antimicrobial properties of the substances used in Yagya can help in curbing the spread of respiratory infection, which are common in polluted environments.

❑ जो मनुष्य-मनुष्य का शरीर धारण करके उत्तम शिक्षा से उत्तम स्वभाव से धर्म युक्त व्यवहार से योग विद्या को ग्रहण करके मुक्ति के सुख के लिए प्रयत्न करता है उसी मनुष्य का जीवन सफल होता है। योग विद्या यानी यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा और समाधि का अभ्यास करें।

❑ उस मनुष्य का जीवन सफल है जो दूसरों से अपने दोषों को सुनकर क्रोध नहीं करे। दोष बताने वाले का उपकार माने कि जिससे दोष सुनने वाला मनुष्य अपने दोषों को दूर करके पाप करने से बचे।

❑ मनुष्य शरीर, मन, इंद्रियों से जितने भी अच्छे बुरे कर्म करता है। उसे उन सबका फल सुख-दुःख के रूप में अवश्य ही मिलता है। परमात्मा की न्याय व्यवस्था के अनुसार बुरे कर्मो के फल किसी भी प्रकार से क्षमा नहीं हो सकते हैं। दुःख भोगना ही पड़ेगा।

-स्वामी दयानन्द

(पृष्ठ 1 का शेष)

थे। वे मानते थे कि वनों में उत्पन्न वन सम्पदा, लकड़ी आदि पर ग्रामीण जनता का अधिकार है। वे अदालतों में उन कानूनों को आपत्तिजनक मानते थे जिनसे न्याय की प्रक्रिया अवरूद्ध होती है। रजिस्ट्री कराने पर भारी रकम चुकाना, स्टैम्प ड्यूटी में बढ़ोत्तरी आदि जनविरोधी अदालती आदेशों की उन्होंने खुलकर खिलाफत की थी।

महात्मा गांधी ने तो स्वेदशी वस्तुओं, विशेषत घर की बनी खादी के प्रयोग पर बहुत बाद में बल दिया, किन्तु हम देखते हैं कि स्वामी दयानन्द की शिक्षाओं से प्रभावित पंजाब के शिक्षित वर्ग ने आर्य समाज में आकर स्वदेशी वस्त्र धारण को अंगीकार किया। 19वीं शताब्दी के अन्तिम दशक में हम देखते हैं कि वयोवृद्ध आर्य लाला साईदास, पैन्शनर जीवनदास, युवा अधिकारी लाला मूलराज, युवा वकील लाला लाजपत राय आदि शतश: लोगों ने स्वदेशी वस्त्रों को स्वयं अपनाया तथा इसका प्रचार किया। दयानन्द ने तो जर्मनी के एक शिक्षा विशेषज्ञ से पत्राचार कर यह योजना बनाई थी कि वे शीघ्र ही भारत के युवकों को पश्चिमी कला-कौशल, विज्ञान तथा उद्योग व्यवसाय की शिक्षा देने के लिए जर्मनी भेजेंगे।

गांधी जी की भांति दयानन्द ने भी गोरक्षा तथा हिन्दी के प्रचार को राष्ट्रीय भावना को बढ़ाने में उपयोगी माना था। गौ रक्षा के आर्थिक पहलू पर जोर देकर उन्होंने गौ वध की हानियों का विस्तार से विवेचन अपने ग्रन्थ गोकरूणानिधि में किया। वे शिक्षा में मातृभाषा तथा राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रयोग के प्रबल पक्षपाती थे। विद्यालयों में हिन्दी शिक्षा का आह्वान करने हेतु उन्होंने शिक्षा कमीशन के अध्यक्ष मि. हैमिल्टन को पत्र भेजे। आर्य समाज की राष्ट्रीय भावना समयान्तर में उस समय प्रत्यक्ष हुई जब कांग्रेस ने आजादी की लड़ाई लड़ी तथा उसमें आर्य समाज के अनुयायियों ने बढ़ चढ़कर भाग लिया। स्वामी दयानन्द साम्प्रदायिक सौहार्द के कट्टर समर्थक थे। उनकी मित्र मंडली में सर सैयद अहमद खां जैसे मुस्लिम सुधारक, राजस्थान के पत्रकार मौलवी मोहम्मद मुराद अली तथा बरेली के पादरी डॉ. स्काट जैसे लोगों की पहचान हुई है। वे धार्मिक मामलों में सहनशीलता के पक्षपाती थे तथा मजहबी मसलों को बौद्धिक स्तर पर सुधारने या निपटाने के पक्षधर थे। उन्होंने राजाओं से लेकर निम्न वर्ग तक को राष्ट्रहित के लिए प्रेरित किया। उनके राष्ट्रवाद का ही परिणाम था कि क्रान्तिकारी राम प्रसाद बिस्मिल तथा अशफाकुल्ला खां जैसे देशभक्तों ने स्वदेश के लिए फांसी का फंदा चूमा।

धार्मिक मृत्यु

य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषंयस्य देवा:।
यस्य छायाऽमृतं यस्य मृत्यु: कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

-यजु: 25/13

भावार्थ:- जो परमात्मा शरीर, आत्मा और समाज के बल को देने वाला है, आत्म ज्ञान का दाता है, जिसकी सब विद्वान् लोग उपासना करते हैं तथा जिसकी आज्ञा व शिक्षा को मानते हैं। जिसका आश्रय ही मोक्ष सुखदायक है तथा जिसकी उपेक्षा करना मृत्यु है, उस सुखस्वरूप सकलैश्वर्य के देने हारे परमात्मा की हम लोग आत्मा और अन्त:करण से विशेष भक्ति करें। **यस्य छाया अमृतं यस्य मृत्यु** का अर्थ है कि प्रभु परमेश्वर की छाया में जो चला जाता है, वह अमर हो जाता है और जो उस प्रभु को बिसार देता है अर्थात् प्रभु के अस्तित्व को नहीं मानता, उसकी जीते जी मृत्यु हो जाती है।

संक्षेप में, जो सर्वान्तर्यामी प्रभु को नहीं मानता, नहीं जानता, नहीं पहिचानता, वह शारीरिक मृत्यु से पहले ही मर जाता है अर्थात् उसकी धार्मिक मृत्यु हो जाती है। जो ईश्वर की छाया में चला जाता है, वह शारीरिक मृत्यु के पश्चात् भी जीवित रहता है।

ईश्वर से प्यार न करने वाला व्यक्ति लोभ, मोह काम, क्रोध, अहंकार का शिकार अधिकतर होता रहता है। कभी मोहवश, कभी लोभवश, कभी कामवश, कभी अहंकारवश तो कभी क्रोधवश मरने से पहले वह सैंकड़ों बार मरता है। परन्तु जो इन व्यसनों से दूर होकर सृष्टिकर्ता, सर्वशक्तिमान प्रभु भक्ति में लीन हो जाता है, उसकी आज्ञाओं का पालन करता है, वह मरकर भी नहीं मरता। उदाहरण- पुरुषोत्तम राम, योगीराज कृष्ण, महात्मा बुद्ध, महर्षि दयानन्द, सुभाष चन्द्र बोस-ऐसे अनेक महापुरुष हुये हैं जिनका जीवन पूर्णतय: धर्मानुकूल था। उनकी शारीरिक मृत्यु औपचारिक है। वे आज भी अमर हैं।

-साभार: पुस्तक 'झील के उस पार'-
लेखक- डॉ. आनन्द अभिलाषी

❑ जो मनुष्य किसी की उन्नति की केवल इच्छा ही नहीं करते है किन्तु सभी के ऐश्वर्य को बढ़ाने की इच्छा करते हैं वे सूर्य के समान उपकार करने वाले होते है-धर्मात्मा होते हैं। अर्थात् सूर्य संसार को प्रकाश देता है बदले में कुछ लेता नहीं है। **-स्वामी दयानन्द**

टंकारा गौशाला में गौ-पालन एवं पोषण हेतु अपील

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा स्थित गौशाला में दान स्वरूप प्राप्त गौ से जहां एक ओर ब्रह्मचारियों हेतु दूध प्राप्त हो रहा है, वहीं बढ़ती गायों के पालन-पोषण हेतु ट्रस्ट पर आर्थिक बोझ पड़ रहा है। आपकी जानकारी हेतु गौशाला से प्राप्त दूध को बेचा नहीं जाता है। ऐसी स्थिति में आप सभी आर्यजनों, दानदाताओं, गौभक्तों से प्रार्थना है कि इस मत में ट्रस्ट की सहायता करने की कृपा करें। एक गाय के वार्षिक पालन-पोषण पर 12000/-रुपये व्यय आ रहा है, जिसमें हरा चारा एवं पौष्टिक आहार जो चारे में मिलाया जाता है तथा गौशाला का रखरखाव सम्मिलित है। आप सभी महानुभावों से निवेदन है कि इस पुण्य कार्य में अपनी श्रद्धानुसार राशि भेजकर पुण्यार्जन करें। आप इस पुण्य कार्य के लिए राशि **श्री महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा, के नाम केवल खाते में आर्य समाज (अनारकली), मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-110001** के पते पर पर भिजवाकर कृतार्थ करें।

टंकारा ट्रस्ट को दी जाने वाली राशि आयकर से मुक्त है।

निवेदक:- योगेश मुंजाल (कार्यकारी प्रधान) **अजय सहगल** (मन्त्री)

No matter how lofty a SADHANA is, it cannot be successful without truth.

टंकारा समाचार अगस्त 2024

Delhi Postal R.No. DL (ND)-11/6037/2024-25-26

अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसेंस नं० U(C) 231/2024-26

Posted at LPC Delhi RMS, Delhi-06 on 1/2-08-2024

R.N.I. No 68339/98 प्रकाशन तिथिः 23.07.2024

मुद्रक, प्रकाशक व सम्पादक–अजय सहगल द्वारा मयंक प्रिंटर्स, 2199/63, नाईवाला, करोल बाग, नई दिल्ली–5 दूरभाष : 41548503 से छपवाकर कार्यालय महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मारक ट्रस्ट टंकारा, आर्य समाज (अनारकली), मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–1 दूरभाष : 23360059, 23362110 से प्रकाशित। संपादक : अजय